वेद में क्या है

(आर्य समाज स्थापना शताब्दी वर्ष के उपलक्ष में)

एक बार आद्योपान्त पढ़ने को अवश्य कृपा करें

लेखक :—

वीरेन्द्र गुप्तः

प्रकाशन मन्दिर

बाजार चौक

मुरादाबाद

सृष्ट्यब्द पूर्व सन्धिकाल युक्त १,९७,२९,४९,०७६

मानव सृष्टि एवम् वेदाब्द १,९६,०८,५३,०७६

दयानन्दाब्द १५१

मई १९७५

बन्धुओं ! आर्य समाज स्थापना शताब्दी का पावन ऐतिहासिक पर्व चैत्र शुक्ल प्रतिपदा सम्वत् २०३२ तदनुसार १२ अप्रैल १९७५ को है। इस शुभ अवसर पर हम आपके कर-कमलों में वेद और महर्षि दयानन्द की विचारधारा की गूँज के कुछ अंश 'वेद मे क्या है' के नाम से 'निःशुल्क' प्रस्तुत करते हैं। हमें आशा है कि इस लघु कलेवर पुस्तिका को पढ़कर आप वेद, जगतगुरू महर्षि दयानन्द सरस्वती और आर्य समाज के सत्य और वास्तविक स्वरूप को समझकर अवश्य ग्रहण करेंगे।

वर्तमान समय के समस्त मानवों के परम सौभाग्य की बात है कि हम प्रभु की महति कृपा से प्रातः स्मरणीय योगीराज महर्षि दयानन्द सरस्वती जी महाराज द्वारा स्थापित आर्य समाज की पुनीत शताब्दी के शुभ अवसर पर विद्यमान हैं।

कृपया इस पुस्तिका को पढ़कर नष्ट न करें। अपितु इष्ट-मित्रों और परिवार जनों को भी पढ़ने के लिए देने का कष्ट करें।

—लेखक

॥ ओ३म् ॥

दूतं वो विश्ववेदसं हव्यवाहममर्त्यम् ।
यजिष्ठमृञ्जसे गिरा ॥ सामवेद १।२।२

हे समस्त ज्ञान, धनों के स्वामी, अमृत दूत सबके परोपकारी, सृष्टिमय महान् यज्ञ के करने वाले, सबसे बड़े उपास्य को मैं वेदवाणी द्वारा अपने अनुकूल भजता हूँ ।

वेद भक्त दयानन्द

किन्हीं पं० जी ने वेद मूर्ति दयानन्द सरस्वती जी महाराज के वेद प्रचार और मूर्ति-पूजा खण्डन के विरुद्ध बम्बई नगर के न्यायालय में एक याचिका प्रस्तुत कर अभियोग लगाया कि दयानन्द झूंठा प्रचार करता है कि वेद में मूर्ति-पूजा नहीं है, जब कि वेद में मूर्ति-पूजा है । न्यायालय से गुरुदेव दयानन्द जी के पास उक्त याचिका का प्रतिवाद प्रस्तुत करने के लिये सूचना पहुंची । दिव्य दयानन्द जी निश्चित तिथि पर न्यायालय में प्रस्तुत हुए । न्यायाधीश महोदय ने कहा-आपके वकील ? स्वामी दयानन्द जी ने कहा—मेरा कोई वकील नहीं, मैं स्वयं ही उत्तर देने आया हूं । न्यायालय के द्वारा अभियोग सुनाया गया । स्वामी जी महाराज ने इसे स्वीकार करते हुए कहा–यदि पं० जी मुझे वेद में मूर्ति-पूजा दिखा दें तो मैं आज से ही मूर्ति-पूजा का खण्डन छोड़ दूँगा । इस पर न्यायाधीश महोदय ने पं० जी से वेद में अपना पक्ष प्रस्तुत करने को कहा । पं० जी ने उत्तर में कहा–मेरे पास वेद नहीं । इस पर वेद भक्त दयानन्द ने उसी समय अपनी बगल से वेद की चारों मूल प्रतियां न्यायाधीश महोदय की मेज पर रखते हुए कहा–यदि आपके पास वेद नहीं तो यह रहे चारों वेद । पं० जी चौंक कर बोले–क्या वास्तव में यही वेद हैं ? सुना था कि वेद इतने बड़े हैं जो ऊँटों पर लदकर चलते हैं । यदि वास्तव में यही वेद हैं तो मैंने इनके आज दर्शन

किये । पं० जी नत-मस्तक हो गये ।

सुप्रसिद्ध योगीराज महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के प्रति अपने समय के ही नहीं, संसार के योगियों में से अति प्रख्यात योगी ऋषि अरविन्द द्वारा यह श्रद्धांजलि बड़ी महत्व पूर्ण है जिसे योगी अरविन्द ने लिखा है ।

"There is nothing fantastic in Dayananda's idea that Veda contains truth of science as well as truth of religion I will even add my own conviction that Veda contains the other truths of a science and the modern world does not at all possess and in that case, Dayananda has rather understated than overstated the depth and range of the Vedic wisdom......If as Dayananda held on strong enough grounds, the Veda reveals to us God, reveals to us the relation of the soul to God and nature, what is it but a Revelation of Divine Truth ? And if as Dayanand held, it reveals them to us with a perfect truth, flawlessly, he might well hold it for an infallible Scripture...In the matter of Vedic interpretation, I am convinced that whatever may be the final complete interpretation, Dayananda will be honoured as the first discoverer of the right clues. Amidst the chaos and obscurity of old ignorance and agelong misunderstanding, his was the eye of direct vision that

pierced the truth and fastened on to that which was essential. He has found the keys of the doors that time had closed and rent asunder the seals of the imprisoned fountains".

(Dayananda and Veda from the article in the Vedic Magazine Lahore for Nov. 1916. by Shri Arvinda.)

अर्थात् ऋषि दयानन्द की इस धारणा में कि वेद में धर्म और विज्ञान दोनों की सच्चाइयाँ पाई जाती हैं कोई उपहासास्पद व कल्पित बात नहीं है । मैं इसके साथ अपनी धारणा जोड़ना चाहता हूँ कि वेदों में एक दूसरे विज्ञान की सच्चाइयाँ भी विद्यमान हैं जिन का आधुनिक जगत को किंचित मात्र भी ज्ञान नहीं है और ऐसी अवस्था में ऋषि दयानन्द ने वैदिक ज्ञान की गम्भीरता के विषय में अतिशयोक्ति से नहीं अपितु न्यूनोक्ति से ही काम लिया है।.........यदि यह बात ठीक है जैसे कि ऋषि दयानन्द का प्रबल प्रमाणों के आधार पर विश्वास था कि वेद में परमेश्वर, प्राकृतिक नियम और परमेश्वर के आत्मा और प्रकृति के साथ सम्बन्ध, इन सब बातों के विषय में सत्य ज्ञान को प्रकाशित किया गया है तो इसे ईश्वरीय सत्य के प्रकाश के अतिरिक्त क्या कहा जा सकता है ? और यदि जैसे कि ऋषि दयानन्द का विश्वास था कि इन विषयों का ज्ञान वेदों में पूर्ण सत्य के साथ निर्दोष रूप में प्रकाशित किया गया है तो उसका निर्भ्रान्त धर्म ग्रन्थ के रूप में वेद को मानना समुचित ही है । ..... वैदिक व्याख्या के विषय में मेरा यह विश्वास है कि वेदों की सम्पूर्ण अन्तिम व्याख्या कोई भी हो ऋषि दयानन्द का यथार्थ निर्देशों के प्रथम

अभिभावक के रूप में सदा मान किया जायगा। पुराने अज्ञान और पुराने युग की मिथ्या ज्ञान की अव्यवस्था और अस्पष्टता के बीच में यह उसकी ऋषि दृष्टि थी जिसने सचाई को निकाल लिया और उसे वास्तविकता के साथ बांध दिया। समय ने जिन द्वारों को बन्द कर रखा था उनकी चाबियों को उसी ने पा लिया और बन्द पड़े हुए स्रोत की मुहरों को उसी ने तोड़ कर परे फेंक दिया।

वेद क्या है ?

वेद ईश्वरीय ज्ञान है। वेद वाणी आदि सृष्टि की वाणी है। वेद संसार की समस्त विद्याओं का सार भूत हैं। समस्त संसार प्रैक्टिकल है और वेद थ्योरिटिकल है। जो संसार में है वह वेद में है और जो वेद में है वह संसार में है। परमेश्वर अनादि हैं इसी कारण उनका वेद ज्ञान भी अनादि है। सृष्टि के प्रारम्भ में 'अग्नि' वायु, आदित्य, अंगिरा' चार ऋषियों का जन्म होता है। और उन्हीं चार ऋषियों के द्वारा 'ऋग्, यजुः, साम, अथर्व', चारों वेदों का ज्ञान परमात्मा समस्त संसार को देता है।

सांसारिक लोक व्यवहार में परीक्षा में उत्तीर्ण होने पर ही डिगरी प्राप्त होती है। परीक्षा में प्रश्न पत्र के ३३ प्रतिशत अंक प्राप्त करना ही पर्याप्त होता है। अधिक के लिये मनाई नहीं। परन्तु परमात्मा की परीक्षा में शत प्रतिशत अंक प्राप्त करके ही मोक्ष रूपी डिगरी प्राप्त होती है। न्याय दर्शन के रचयिता महामुनी गौतम लिखते हैं (ज्ञानात् मुक्तिः) जब-जब सृष्टि की रचना होती है तब-तब मोक्ष में जाने वाली चार आत्माओं का उपरोक्त ऋषित्व नाम से जन्म होता है, जो शेष सृष्टि

के मानवों को वेद के पूर्ण ज्ञान को छन्द, स्वरित और पूर्ण क्रम बद्ध सहित सुनाकर अपने-अपने पूर्ण ज्ञान की प्रामाणिकता प्रस्तुत कर मोक्ष प्राप्ति के लक्ष्य की पूर्ति करते हैं। इसी क्रम से समस्त सृष्टियों में परमात्मा का वेद ज्ञान पहुँचता रहता है।

हमारी हार्दिक कामना है कि रूस व अमरीका अन्यत्र मानव सृष्टि भूमण्डल पर पहुंचे। उसमें वैज्ञानिक सफलता उनकी होगी और आध्यात्मिक विजय हमारी होगी। क्योंकि वेद का ज्ञान देवनागरी लिपि और संस्कृत भाषा वहाँ भी देखने को मिलेगी, तो संसार वेद की सारभौमता सरलता से स्वीकार करेगा।

पाश्चात्य विद्वान विलसन और मैक्समूलर आदि वेद को मनुष्य रचित कहते हैं और वेदों की उत्पत्ति के विषय में कोई चौबीस सौ वर्ष कोई उनतीस सौ और कोई इकत्तीस सौ वर्ष बताते हैं दोनों ही बातें सर्वथा मिथ्या हैं। मनुष्य रचित पुस्तक की व्यवस्था कभी पूर्ण नहीं होती। समस्त संसार के लिए एक रूप नहीं होती और सदैव के लिये भी नहीं होती। परन्तु वेद आदि सृष्टि से हैं। समस्त ज्ञान से परिपूर्ण हैं, समस्त संसार के लिए हैं और सृष्टि पर्यन्त एक रूपता के साथ ज्ञान देते रहेंगे। इन विद्वानों ने नित्य प्रति की दिनचर्या। बहीखाते पर मिति वार सम्बत् आदि लिखने का क्रम और मांगलिक कार्यों में संकल्प पठन विद्या से ही वेद की उत्पत्ति का अनुमान लग सकता है, इस पर ध्यान नहीं दिया।

'वेद की उत्पत्ति आदि सृष्टि से है। सृष्टि काल को ब्रह्मा का दिन और प्रलय काल को ब्रह्मा की रात्रि कहा है। ब्रह्म दिन 'चार अरब, बत्तीस करोड़, वर्ष' का होता है और ब्रह्म रात्रि भी इतने ही समय की होती है। एक हजार चतुर्युगियों

का एक ब्रह्म दिन होता है। १७२८,००० 'सत्रह लाख, अट्ठाईस हजार, वर्ष' सतयुग के। १२,९६,००० 'बारह लाख, छानवे हजार' वर्ष त्रेता के। ८, ६४,००० 'आठ लाख, चौंसठ हजार, वर्ष' द्वापर के। ४, ३२,००० 'चार लाख, बत्तीस हजार, वर्ष', कलियुग के। सब मिलाकर ४३, २०,००० 'तितालीस लाख, बीस हजार वर्ष', एक चतुर्युगी के होते हैं। ७१ चतुर्युगियों का अर्थात् ३०,६७,२०,००० 'तीस करोड, सरसठ लाख, बीस हजार, वर्ष, का एक मन्वन्तर होता है। १४ मन्वन्तर, अर्तात् ९९४ चतुर्युगियों की मानव सृष्टि होती है। शेष छः चतुर्युगियों में से तीन चतुर्युगियाँ सृष्टि के प्रारम्भिक दिन से मानव सृष्टि होने के दिन तक सृष्टि की समस्त रचना में लगते हैं इसी प्रकार मानव की प्रलय के दिन से तीन चतुर्युगियाँ शेष सृष्टि के विनाश में लगते हैं।

सृष्टि की रचना से अब तक छः मन्वन्तर व्यतीत हो चुके हैं। १-स्वायम्भव, २—स्वारोचिष, ३—औत्तमि, ४-तामस, ५—रैवत, ६-चाक्षुष अर्थात् १, ८४,०३, २०,००० 'एक अरब चौरासी करोड़, तीन लाख, बीस हजार, वर्ष' हुए। और सातवें वैवस्वत मन्वन्तर की २७ चतुर्युगियाँ व्यतीत हो चुकीं और २८ वीं चतुर्युगी में कलियुग के ५०७५ वर्ष व्यतीत हो चुके और ४,२६, ९२५ वर्ष अभी शेष हैं। अर्थात् १२, ०५,३३,०७५ 'बारह करोड़, पाँच लाख, तैंतीस हजार, पचहत्तर वर्ष', वैवस्वत मनु के व्यतीत हो चुके हैं, और '१८,६१,८६, ९२५ 'अठारह करोड़, इक्सठ लाख, छियासी हजार, नौ सौ, पच्चीस वर्ष,' शेष हैं। मानव सृष्टि अर्थात् वेद काल १, ९६, ०८, ५३, ०७५ 'एक अरब छानवे करोड़, आठ लाख, तरेपन हजार, पचहत्तर वर्ष,' व्यतीत हो चुके हैं और मानव सृष्टि अर्थात् वेद काल २,३३,३२,२६,९२५

'दो अरब तैंतीस करोड़, बतीस लाख छत्तीस हजार, नौ सौ-पच्चीस वर्ष'. शेष हैं। पूर्ण मानव सृष्टि अथात् पूर्ण वेद काल ४,२९,४०,८०,००० 'चार अरब, उनतीस करोड़, चालीस लाख, अस्सी हजार वर्ष' का है और २,५९,२०,००० 'दो करोड़ उनसठ लाख, बीस हजार, वर्ष,' सन्धि काल के मिला कर४,३२, ००, ००,००० 'चार अरब, बत्तीस करोड़ वर्ष,' की एक सृष्टि होती है। वर्तमान वर्ष वैवस्वतमनु की २८ वीं चतुर्युगी के कलियुग का ७६ वाँ अर्थात् मानव सृष्टि वेद काल) का १,९६,०८,५३,०७६, 'एक अरब छानवे करोड़, आठ लाख तरेपन हजार, छियत्तर वां वर्ष' है, जो विक्रम सम्वत २०३२ चैत्र शुक्लः प्रति पदा तदनुसार १२ अप्रेल १९७५ से प्रारम्भ है।

यजुर्वेद ७/३० में 'मधव' (मधु। शब्द के आधार पर कहा जा सकता है कि मानव सृष्टि चैत्र मास में हुई। अमावस्या मास का अन्तिम दिन है। इस तिथि का संकेत ३० के अंक से होता है। इस लिये शुक्लः प्रति पदा को सृष्टि को रचना का होना संगत है।

वेद में क्या है?

वेद में मन्त्र हैं। मन्त्रों में संसार की समस्त विद्याओं और जो पदार्थ विद्याओं से जाने जाते हैं उन सब का समावेश है। प्रभु की शक्ति, रचना और उपासना का क्रम है। हम आपके सामने कुछ वेद मन्त्र अर्थ सहित प्रस्तुत करते हैं।

विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव।
यद्भद्रं तन्न आ सुव। यजुर्वेद ३०।३

अर्थ-हे सकल जगत् के उत्पत्तिकर्त्ता, समग्र ऐश्वर्ययुक्त, शुद्ध स्वरूप, सब सुखों के दाता परमेश्वर। आप कृपा करके हमारे

सम्पूर्ण दुर्गुण, दुर्व्यसन और दुःखों को दूर कर दीजिये। जो कल्याण कारक गुण, कर्म, स्वभाव और पदार्थ हैं, वह सब हम को प्रदान कीजिये।

पहले कमरे की सफाई की जाती है। पश्चात् निवास किया जाता है। यह नहीं कि उसकी फिर सफाई न की जाय, परन्तु नित्य प्रति सफाई करनी पड़ती है। यदि हम कमरे की सफाई करके उसे बन्द करदें और कुछ दिन बाद खोल कर देखेंगे तो उसमें धूल और जालों का ढेर लगा होता है। आश्चर्य होता है कि बन्द कमरे में इतनी धूल और जाले कहाँ से आ गये। इसी प्रकार शरीर से नित्य मल, मूत्र, और नाक, कान, मुख से मलों का निकलते रहना और इनको नित्य प्रति निकालते रहना ही स्वस्थ शरीर के लक्षण हैं और यदि किसी कारण से यह शरीर में रुक जाते हैं तो यही रोगावस्था को उत्पन्न कर देते हैं। बन्द कमरे के समान धूल और जालों के ढेर लग जाते हैं। यह सब वायु के प्रवेश के साथ-साथ हर जगह प्रवेश कर जाते हैं। इसी का नाम वेद ने 'दुरित' शब्द से दिया है। अर्थात् हमें अपने शरीर से, मन से नित्य प्रति 'दुरित' को निकालते रहना चाहिये। जब मन बुद्धि और चित्त से सदैव 'दुरित' का निष्कासन होता रहेगा तो भद्रम्' सुगमता से प्रवेश होता रहेगा। अर्थात् हमें नित्य प्रति अपने सम्पूर्ण दुर्गुण, दुर्व्यसन, दुराचार, दुर्व्यवहार को निकाल ते रहना चाहिये क्यों कि इनकी उत्पत्ति स्वाभाविक है। इस लिये कमरे में नित्य झाड़ू लगाना उचित है और जब समस्त दुर्गुण, दुर्व्यसन निकल जायेंगे तो 'भद्रम्' कल्याण कारी सभी कर्मों का प्रवेश होना स्वाभाविक हो जायगा।

सत्य को सत्य और असत्य को असत्य मानना, चाहे अपना ही क्यों न हो, यह नहीं कि अपने असत्य को सत्य सिद्ध करना

और दूसरे के सत्य को असत्य सिद्ध करना यह कला की दृष्टि से तो प्रवीणता दीखेगी परन्तु इसे 'दुरित' ही कहा जायगा। बहुधा देखने में आता है, स्थूल-काय, ऊँची आयु, ऊँचा कुल और अपने वाक्य चातुर्य की प्रखरता के बल पर अपने दुराग्रह और असत्य लाप को भी 'मैं कहता हूँ' कहकर मन वाने वाले 'दुरित' के पंजे से बच नहीं सकेंगे, और 'भद्रम्' कभी प्राप्त नहीं हो सकेगा।

एक साधु जी महाराज अलख जगाते हुए सेठ जी की दुकान पर पहुँचे। भोजन का निवेदन किया, सेठ जी बाबा जी को साथ लेकर घर पर आये और भोजन कराया। भोजन के पश्चात् सेठ जी बोले—बाबा जी! कुछ उपदेश करो। बाबा जी—बच्चा हम ऐसे ही उपदेश नही देते। हमें पहले अच्छे-अच्छे माल खिलाओ, सेवा करो तो उपदेश करेंगे। सेठ जी—अच्छा बाबा जी! कल हम आपको अच्छे-अच्छे स्वादिष्ट भोजन खिलायेंगे। आप कल अवश्य आने की कृपा करना। बाबा जी अगले दिन आगये। भोजन पाया, पेट भर गया। दूध की खीर बच रही। बाबा जी ने सेठ जी से कहा—इस खीर को आप हमारे कमण्डलु में लौट दो, इसे शाम को खायेंगे। सेठ जी ने कमण्डलु का ढक्कन खोला। खीर लौटते-लौटते रुक गये और कहा—बाबा जी कमण्डलु में तो गोबर-सा लगा है। बाबा जी—तो क्या हुआ? सेठ जी—बाबा जी मैंने खीर बहुत पैसा लगा कर तैयार की है, आपको खिलाने के लिये। गोबर में डालकर इसे ऐसे ही नष्ट कर दूँ? बाबा जी—अच्छा! तू यह जानता है, कि उत्तम स्वादिष्ट खीर गोबर से सने कमण्डलु में डालने से खराब हो जायगी? सेठ जी—हाँ बाबा जी! ठीक ही तो है। यदि आप आज्ञा करें तो मैं कमण्डलु धोकर उसमें खीर लौट दूँ। बाबा

जी—जैसी तेरी इच्छा। सेठजी ने अच्छी प्रकार कमण्डलु धोकर साफ किया और उसमें खीर लौट दी। बाबा जी कमण्डलु उठा कर चलने लगे। सेठ जी ने आश्चर्य से कहा-बाबा जी! आपने कुछ उपदेश नहीं दिया? बाबा जी ने कहा-अरे! जब तू यह जानता है, पहले 'दुरित' को हटाओ तब भद्रम' को डालो। मैं तुझे क्या उपदेश करूँ? तू सब कुछ जानता है। सेठ जी के नेत्र खुले और 'दुरित' को निकालने का संकल्प किया। वेद का भी यही उपदेश है 'दुरितानि परा सुव, यद्भद्रम् तन्नआसुव'।

वेद में पारब्रह्म परमेश्वर के स्वरूप का वर्णन करते हुए कहा—

स पर्य्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविरँ
शुद्धमपापविद्धम्। कविर्मनीषी परिभूः
स्वयम्भूर्याथातथ्य तोऽर्थान्व्यदधा-
च्छाश्वतीभ्यः समाभ्यः॥ यजुर्वेद ४०।८

वह परमात्मा आकाश के समान सब जगह में परिपूर्ण व्यापक है, सब जगत का वही रचने वाला है, वह कभी शरीर (अवतार) धारण नहीं करता, वह अखण्ड अनन्त और निर्विकार है। वह अच्छेद्य, अभेद्य, निष्कम्प और अचल है, अति सूक्ष्म होने से नाडी आदि का प्रतिबन्ध भी नहीं हो सकता, वह सदैव निर्मल अविद्यादि जन्म, मरण, हर्ष, शोक, क्षुधा, तृषादि दोषों से रहित है। परमात्मा कभी अन्याय नहीं करता। वह सदैव न्यायकारी ही है। महाविद्वान जिसको विद्या का अन्त नहीं, सब जीवों के मन का साक्षी, सब दिशा और सब जगह में परिपूर्ण हो रहा है। जिसका आदि कारण माता, पिता उत्पादक कोई नहीं किन्तु वही सब का आदि कारण है। उस

प्रभु ने अपनी प्रजा को यथावत् सत्य विद्या जो चार वेद हैं। उसका सब मनुष्यों के परमहितार्थ उपदेश किया है।

जब व्यक्ति सृष्टि के रचियता के सत्य स्वरूप को जान लेता है तो वह आनन्दित हो कहता है।

त्वं हि नः पिता वसो त्वं माता शतक्रतो बभूविथ।

अधाते सुम्नमीमहे॥ ऋग्वेद ८।९८।११

हे सब के पिता सबको बसाने वाले, सर्व व्यापक ! हे अपरिमित ज्ञान, कर्मों वाले ! तू निश्चय से हमारा पिता और तू ही हमारी माता है। इसी कारण हम तुझ से सुख की याचना करते हैं।

और जब हम अपनी कामनाओं की पूर्ति के लिये याचना करते हैं तो वह कहते हैं। मैं सब कुछ देख रहा हूं।

यस्तिष्ठति चरति यश्च वञ्चति

यो निलायं चरति यः प्रतङ्कम्।

द्वौ संनिषद्य यन्मन्त्रयेते राजा तद् वेद

वरुणस्तृतीयः॥ अर्थवेद ४।१६।२

जो खड़ा है, जो चलता है और जो दूसरे को ठगता है, जो छुप छुप कर कहीं जाता है, जो दूसरे को भारी पीड़ा देने आदि अत्याचारों को करता है और जो कुछ दो पुरुष भी एक साथ मिल बैठकर गुप्त विचार करते हैं, सबका शासक वरुण परमेश्वर उन दोनों के साथ तीसरा होकर उनकी गुप्त बातों को जानता है।

तब हम कहते हैं।

तदेजति तन्नैजति तद्दूरे तद्वन्तिके।

तदन्तरस्य सर्वस्य तदु सर्वस्यास्य बाह्यतः॥ यजुर्वेद ४०।५

वह स्वयं नहीं चलता परन्तु प्राकृतिक परमाणुओं को सृष्टि रचनार्थ अन्तः प्रेरणा से गति युक्त कर देता है। समस्त ब्रह्माण्ड को गति दे रहा है। वह (सर्वव्यापक) सब में रमा हुआ होने से दूर से दूर तक फैला हुआ है और वह इतना पास है कि हृदय में विराजमान है। वह इस समस्त जगत और जीवों के भीतर और वही इस समस्त जगत के बाहर भी वर्त्तमान है।

ओ३म् क्रतो स्मर। यजुर्वेद ४०/१५

तू ईश्वरीय वाचक नाम 'ओ३म्' का ही स्मरण कर। और व्यवहार कैसा करें।

अनुव्रतः पितुः पुत्रो माता भवतु संमनाः।

जाया पत्ये मधुमतीं वाचं वदतु शान्तिवाम्॥ अथर्व ३।३०।२

पुत्र पिता का आज्ञाकारी हो और माता के साथ अनुकूल और सद्-हृदय वाला होकर रहे और स्त्री अपने पति के लिये सदा मधुर शान्तियुक्त सुख प्रद वाणी को बोले।

वेद के अन्य भक्त

अरब देश के विद्वान लाबी द्वारा वेदों का गुणगान

अखताब के पुत्र तुर्फा के पौत्र लाबी नामक अरबी कवि ने जो मोहम्मद साहेब के जन्म से लगभग २४०० वर्ष पूर्व विद्यमान थे, वेदों का गुणगान अरबी भाषा की कविता में किया जिसे हम नीचे अंकित कर रहे हैं। यह रचना हारून रशीद के राज-दरबारी कवि असमाई मलेकुस् शरा द्वारा संगृहीत सीरुल् अकूल नामक (अब बेरुद पब्लिशिंग कम्पनी बेरुद् पैलस्टाइन

द्वारा प्रकाशित तथा हाजी हमज़ा शिराज़ी एण्ड को पब्लिशर्स बुक सेलर्स बन्दर रोड बम्बई से उपलब्ध पुस्तक के पृष्ठ ११८ पर पाई जाती है।

१–अया मुबारकल अर्ज़ योशेय्ये नुहा मिनल् हिन्दे फ़ारादकल्ला हो मैय्योनज्ज़ेला जिक्रतुन्।

२–वहल तजल्लेयतुम् ऐनाने सहवो अरबातुन् हाज़ही युनज्जेल रसूलो जिक्रतान मिनल् हिन्दतुन्।

३–यक़ूलूनल्लाह या अहलल् अर्जे आलमीन कुल्लाहुम् फ़त्तबिऊ जिक्रतुल् वेद हक्कन् मालम् युनज्जेलहून्।

४–वहोवालम् उस् साम वल युजुर मिनल्लहे तनज़ीलन् फ़ऐनमा या अरवेयो मुत्तबे अन् यो बशरेयो न जातुन्।

५–व असनैने हुमा ऋक् व अतर नासहीन क अख़ूवतुन् व अस्नात अला ऊदन् वहोव मशअरतुन्।

भाषानुवाद—

१–ऐ हिन्दुस्तान की धन्य भूमे! तू आदर करने योग्य है, क्योंकि तुझ में ही ईश्वर ने अपने सत्य ज्ञान का प्रकाश किया है।

२–ईश्वरीयज्ञान रूप ये चारों पुस्तकें (वेद) हमारे मानसिक नेत्रों को किस आकर्षक और शीतल उषा की ज्योति को देते हैं। परमेश्वर ने हिन्दुस्तान में अपने पैग़म्बरों अर्थात् ऋषियों के हृदयों में इन चारों (वेदों) का प्रकाश किया।

३–और वह पृथिवी पर रहने वाली सब जातियों को उपदेश देता है कि मैंने वेदों में जिस ज्ञान को प्रकाशित किया है उसको तुम अपने जीवनों में क्रियान्वित करो, उसके अनुसार आचरण करो। निश्चय से परमेश्वर ने ही वेदों का ज्ञान दिया है।

४–साम और यजु वे ख़जाने (कोष) हैं जिन्हें परमेश्वर ने दिया है। ऐ मेरे भाइयों! इनका तुम आदर करो क्योंकि वे हमें मुक्ति

का शुभ समाचार देते हैं।

५–इन चार में से शेष दो ऋक् और अतर (अथर्व) हमें विश्व भ्रातृत्व का पाठ पढ़ाते हैं। ये दो ज्योतिः स्तम्भ हैं जो हमें उस लक्ष्य (विश्व भ्रातृत्व) की ओर अपना मुहं मोड़ने की चेतावनी देते हैं।

इससे यह स्पष्टतया ज्ञात होता है कि ईसवी सन् से लगभग १७०० वर्ष पूर्व भी सेमेटिक् लोगों में वेदों के प्रति कितने उत्तम भाव थे।

अरब देशीय कवि लाबी द्वारा वेदों के प्रति समर्पित यह श्रद्धांजलि स्वर्ण अक्षरों में लिखने योग्य है।

दाराशिकोह का वेद को ईश्वरीय ज्ञान मानना

मुस्लिम मतान्ध कुख्यात अत्याचारी शासक औरगंजेब के बड़े भाई दाराशिकोह का नाम सुप्रसिद्ध है। वह सत्य ईश्वरीय ज्ञान की खोज में निरन्तर लगे रहते। उन्होंने कुरानशरीफ, तौरेत, इञ्जील और ज़बूर आदि अनेक धर्म ग्रन्थों का अवलोकन किया। सभी में कुछ रहस्य पूर्ण तथ्य पाये जिनका अर्थ समझ नहीं आता। उन्होंने हिन्दुओं के धर्म ग्रन्थों का मन्थन किया और वह जिस परिणाम पर पहुँचे उन्हीं के शब्दों में।

बाद अज़ तहकीक इन मरातिब मालूमशुद कि दरमियान इंकौमे क़दीम पेश अज़ कुतब समावी चाहर कुतब आस्मावी कि ऋग्वेद, यजुर्वेद व सामवेद व अथवर्णवेद बाशद बर इबनाये आ वक्त के बुजुर्गतर आहा आदम सफ़ी अल्लाह व अलीस्सल्लाम अस्त बरजमी अहक़ाम नाजिल शुदा।

अर्थात् क्रमशः अनुसन्धान करने के पश्चात् यह ज्ञात हुआ कि इस प्राचीन हिन्दू जाति में समस्त 'ईश्वरीय पुस्तकों' अर्थात् क़ुरान, इञ्जील, तौरेत, तथा ज़बूर आदि के पूर्व चार ईश्वरीय पुस्तकें जिनके नाम (१) ऋग्वेद (२) यजुर्वेद (३) सामवेद

तथा (४) अथर्ववेद हैं, उस समय के ऋषियों पर जिनमें सबसे बड़े आदम अथवा ब्रह्मा जी थे समस्त आज्ञाओं के साथ ईश्वर की ओर से प्रकट हुई थी।

दाराशिकोह ने वेदों की प्राचीनता और एकेश्वर वाद के सिद्धान्त से प्रभावित होकर संस्कृत भाषा का अध्ययन किया और इतनी योग्यता प्राप्त कर ली कि वे वेदों और उपनिषदों का अध्ययन कर उनके तत्व को भली भाँति समझ लेते थे और मानते थे कि उपनिषद् वेदों में प्रतिपादित ब्रह्मविद्या के सार-भूत ग्रन्थ हैं। इन चारों वेदों में समस्त ब्रह्म प्राप्ति के साधनों के रहस्यों तथा ईश्वर की एकता के साक्षात् करने के अभ्यासों का वर्णन है, उनका उननिषद् नाम है और इनमें सर्वोत्तम उपासना समझ कर अध्ययन किया करते थे।

दाराशिकोह ने १०६७ हिजरी में उस समय के वेद और उपनिषद् के ज्ञाता प्रसिद्ध पण्डितों और सन्यासियों को एकत्रित करके उनकी सहायता से स्वयं उपनिषदों का फारसी भाषा में अनुवाद किया। ईशोपनिषद् के विषय में (जो अन्य सब उप-निषदों का मूल है और स्वयं यजुर्वेद का ४०वाँ अध्याय है) दाराशिकोह ने लिखा है।

किताब कदीय कि बेशको शुबह अव्वलीम किताब समावी व सरे चश्माये तहक़ीक व बहरे तोही दस्त।

अर्थ—यह पुस्तक अनादि है और इसमें किसी प्रकार का सन्देह नहीं कि समस्त ईश्वरीय पुस्तकों में यह प्राचीनतम है और परम सत्य का स्रोत तथा ब्रह्मज्ञान का समुद्र है।

इस प्रकार दाराशिकोह ने वेदों को परम पवित्र ईश्वरीय ज्ञान के रूप में स्वीकार किया और बताया कुरानशरीफ के इस वाक्य को जो अरबी में लिखा है।

इन्न कुराने करीम—फी किताब मंकनू-लाये

मस्सहू इल्ला अल् मतहून-तंजीलमिन् रब्बुल आलमीन।

पारा २७ सूरे वाकया रुकु १६/१

अर्थात्—कुरानशरीफ एक पुस्तक है और वह पुस्तक गुप्त है। उसका ज्ञान उसी को होता है जिसका हृदय पवित्र हो और वह पुस्तक संसार के पालनकर्त्ता ईश्वर की ओर से प्रकट हुई है।

कुरानशरीफ की उक्त पंक्तियों में कुरान के विषय में तीन बातों का उल्लेख किया गया है—१. कुरानशरीफ किसी अन्य पुस्तक में विद्यमान है और वह पुस्तक गुप्त है। २. इस पुस्तक को जिसमें कुरान विद्यमान है कोई नहीं समझ सकता। हाँ जिनका हृदय पवित्र है वे ही उस पुस्तक को समझ सकते हैं। ३. वह मौलिक पुस्तक किसी मनुष्य के द्वारा नहीं रची गई बल्कि वह स्वयं जगत के पालनकर्त्ता परमेश्वर की ओर से उतरी है।

प्रायः मौलवी लोग कुरानशरीफ के उक्त आयत का अर्थ करने में बड़े चक्कर में पड़ जाते हैं। वे यह सिद्ध करने का प्रयत्न करते हैं कि यहाँ निर्देश तौरेत, इंजील या ज़बूर का है जिसे अंग्रेजी में बाइबल् के नाम से कहते हैं, किन्तु वर्तमान बाइबल् में कुरानशरीफ का होना सिद्ध नहीं होता, दाराशिकोह का तो निश्चित मत था कि यह आयत ज़बूर, तौरेत और इंजील व बाइबल् के सम्बन्ध में नहीं है वरन् नाज़िल (उतरी हुई) इस शब्द से ऐसा प्रकट होता है कि ये पंक्तियाँ लोहे महफूज़ या सुरक्षित तख्ती के विषय में भी नहीं बल्कि वेद व तदाश्रित उपनिषद् के विषय में हैं जैसा कि उन्होंने स्पष्ट लिखा है—

जाहिर मीशवत किईं आयत बैनहू दरईं क़िताब क़दीमस्त।

व मालूम मीशवत कि ईं आयत दर हक़ ज़बूरो तौरेत व इंजील नेस्त बल्कि अज़ लफ़्ज़तंज़ील चुनो जाहिर मी गरदद कि दर हक़ लोहेमफ़ूज हम नेस्त। चूं उपनिषद कि सर पोशीदनी अस्त अस्लो ईं किताब अस्त व आयत हय कुरान-मजीद बैनहू दर आयाफ़्ता मीश्वद पस।

अर्थात् ऐसा प्रकट होता है कि कुरानशरीफ की यह आयत इसी अनादि पुस्तक (वेद वा तदाश्रित उपनिषद्) के विषय में है। उन्होंने इसी प्रसंग में यह भी लिखा है।

किताब ब तहकीक कि किताब मकनून ईं किताबे क़दीम बर शद व अज़ी फ़क़ीर रा नादानिस्तां व नाफ़हमीदा फ़हमीदा शुद।

चूंकि उपनिषद् गुप्त रहस्य है इसलिए इस किताब (कुरानशरीफ) का मूल स्रोत है और कुरानशरीफ की कई आयतें ज्यों की त्यों उनमें पाई जाती हैं अतः निश्चित है कि किताब अर्थात् गुप्त पुस्तक यही प्राचीन पुस्तक वेद वा उपनिषद् है और इसी से इस सेवक को (मुझ दाराशिकोह को) अज्ञात बातें ज्ञात हुयीं और जो बातें (कुरानशरीफ) की समझ में नहीं आती थीं वे भी (उपनिषद् से) समझ में आ गयीं।

इनका उपनिषद भाष्य 'सिर्रे अकबरी' (महान रहस्य) के नाम से प्रसिद्ध है।

मुँह में वेद हाथ में छुरी

पाश्चात्य विशारदों में अग्रणी माने जाने वाले प्रो० मैक्स-मूलर ने वेद भाष्य किया। उनका उद्देश्य वेदों के अनुवाद करने आदि में शुद्ध न था और उनका लक्ष्य भारतीयों को ईसाई बनाने में प्रवृत्त व प्रोत्साहित करना था। जो निम्न-लिखित पत्र व्यवहार से स्पष्ट ज्ञात होता है।

मैक्समूलर ने भारत मन्त्री ड्यूक आफ़ आर्गायल को १६ दिसम्बर १८६८ के एक पत्र में लिखा—

The ancient religion of India is doomed and if Christianity does not step in, whose fault will it be?

अर्थात्—भारत के प्राचीन धर्म का नाश तो अब निश्चित है और यदि ईसाइयत आकर उसका स्थान न ग्रहण करे तो यह किसका दोष होगा?

सन् १८६८ में अपनी पत्नी के नाम एक पत्र लिखते हुए प्रो० मैक्समूलर ने लिखा।

'I hope I shall finish that work and I feel convinced though I shall not live to see it, yet this edition of mine (of the Rig Veda) and the translation of Vedas will hereafter tell to a great extent on the fate of India and on the growth of millions of souls in that country. It is the root of their religion and to show them what the root is, is I feel sure, 'the only way of uprooting all that has been sprung from it during the last three thousand years.'

अर्थात् मुझे आशा है कि मैं उस काम को (वेदों का सम्पादनादि) पूरा कर दूंगा और मुझे निश्चय है कि यद्यपि मैं उसे देखने के लिये जीवित न रहूंगा तो भी मेरा ऋग्वेद का यह संस्करण और वेदों का अनुवाद भारत के भाग्य और लाखों भारतीयों के आत्माओं के विकास पर प्रभाव डालने वाला होगा। यह (वेद) उनके धर्म का मूल है और मूल को दिखा देना, उससे पिछले तीन हजार वर्षों में जो कुछ निकला है उस को मूल सहित उखाड़ देने का सबसे उत्तम प्रकार है।

प्रो० मैक्समूलर के घनिष्ठ मित्र ई० बी० पुसे ने उन्हें जो पत्र लिखा वह भी इस प्रसंग में उल्लेखनीय है।

Your work will form a new era in the efforts for the conversion of India' and Oxford will have reason to be thankful that by giving you a home, It will have facilitated a work of such primary and lasting importance on the conversion of India. and which by enabling us to compare that early 'false religion' with the true, illustrates the more then blessedness of what we enjoy.

अर्थात् आपका कार्य भारतीयों को ईसाई बनाने के यत्न में नवयुग लाने वाला होगा, और आक्सफोर्ड को अपने को धन्य समझने का अवसर होगा, कि उसने आपको प्राश्रय देकर भारत को ईसाई बनाने के प्रथम और अत्यावश्यक कार्य को सुगम बना दिया। साथ ही यह आपका कार्य हमें समर्थ बनाएगा कि हम पुराने झूठे धर्म की सच्चे (ईसाई) धर्म के साथ तुलना का आनन्द उठायें इत्यादि।

भारतीयों को ईसाई बनाने की धुन प्रो० मैक्समूलर के सिर पर कैसी सवार थी यह श्री एन०के० मजूमदार नामक ब्रह्म समाजी सज्जन को सन् १८६६ में लिखे एक पत्र से भलीभांति ज्ञात होता है जिसमें प्रो० मैक्समूलर ने लिखा था—

Tell me some of your chief difficulties that prevent you and your countrymen from openly following Christ and when I write to you, I shall do my best to explain how I and many who agree with me have met them and solved them...From my point of view India, at least the best part of it is already converted to Christianity. You want no persuasion to become

a follower of Christ, Step boldly forward; it will not break under you and will find many friends there to welcome you on the other shore and among them none more delighted than your old friend and fellow-labourer, F. Maxmuller.

(Life and letters of F. M. Muller published by Mrs. Georgina Mexmuller London 1902)

अर्थात् आपको और आपके देशवासियों को खुले और पर ईसामसीह की शरण में आने में जो कठिनाइयाँ हैं। उन्हें मुझे बताइये और मैं अपना उत्तर उनके विषय में लिख दूंगा। मेरे दृष्टिकोण से तो भारत कम से कम इसका सर्वोत्तम भाग ईसाई मत में परिवर्तित हो चुका है। आपको ईसाई बनाने की प्रेरणा की भी आवश्यकता नहीं। बस अब साहस पूर्वक निर्भयता के साथ आगे बढ़िये। यह आपके नीचे टूट न जायगा और आप देखेंगे कि आपका स्वागत करने के लिए अन्यों के साथ आपका पुराना साथी और मित्र मैक्समूलर भी उपस्थित होगा।

इन उद्धरणों से यह स्पष्ट है कि प्रो. मैक्समूलर का वेदों के अनुवादादि का कार्य वैदिक धर्म को नीचा दिखा कर ईसाई मत की श्रेष्ठता दिखाने के लिये था न कि शुद्ध भावना तथा सत्यग्रहरण से प्रेरित।

अंग्रेजों ने अपने शासन काल में ऐसी शिक्षा पद्धति को जन्म दिया जिस का उद्देश्य ही प्रवर्तक लौर्ड मैकाले के शब्दों में

'English educaton would train up a class of persons Indian in blood and coluor, but English in tastes, in opinions, in morals and in intellect.'

अर्थात् अंग्रेजी शिक्षा एक ऐसे वर्ग को शिक्षित करेगी जिसका रुधिर और रंग तो भारतीयों का होगा किन्तु जो अपनी रुचि, सम्मति, आचार, व्यवहार और बुद्धि में अंग्रेज होंगे।

इस शिक्षा पद्धति का ऐसा ही भयंकर परिणाम हुआ और आज स्वतन्त्र होने के पश्चात् भी हो रहा है।

भारतीय संस्कृति के मूल पर कुठाराघात करने वाले (शत्रु समान) मैक्समूलर को 'चाटुकारिता' प्रिय 'शल्य' प्रवृत्ति में रत कुछ गिने चुने भारतीयों ने 'भारतीय भक्त मैक्समूलर' की उपाधि दे डाली। इसी प्रकार की बौद्धिक दासता को स्वीकार करने वाले कुछ विद्या-विशारदों ने आज भी संस्कृत भाषा की एम० ए० परीक्षा में मैक्समूलर के ही भाष्य को प्राथमिकता प्रदान की है। कैसे दुर्भाग्य की बात है, एक ओर हम संस्कृति की रक्षा का ढन्डोरा पीटते हैं और दूसरी ओर स्वयम् ही संस्कृति के मूल को मैक्समूलर के वेद भाष्य के द्वारा काट रहे हैं। मेरा उद्देश्य जबरन योगेश्वर दयानन्द सरस्वती जी महाराज का वेद भाष्य लादने का नहीं। मेरा स्पष्ट मत है कि भारत भर के समस्त वेदानुयायी विद्वान मिलकर अष्टाध्यायी, महाभाष्य, निरुक्त और निघन्टु की कसौटी पर सभी वेद भाष्यों को देखें और जो कसौटी पर सही उतरे उसी को मान्यता प्रदान करें।

हमारी संस्कृति को नष्ट करने का एक और अभियान चला है। उस अभियान का नाम है 'हिप्पी वाद'। आज का नौजवान 'हिप्पी वाद' की ओर बड़ी ही तेजी से दौड़ रहा है। मैं कह सकता हूं जिस प्रकार आज हमारे सामने मैक्समूलर के वेद भाष्य करने का रहस्य खुल कर आया है इसी प्रकार एक न एक दिन 'हिप्पी वाद' के द्वारा हमारी संस्कृति को नष्ट करने के षड्यन्त्र का रहस्य भी खुलकर आयेगा। यह मेरी पूर्व चेतावनी है, यदि हमारे युवकों को इस भयंकर ज्वाला मुखी में कूदने से नहीं रोका गया तो इसका परिणाम बहुत ही भयंकर निकलेगा।

कसौटी पर

यजुर्वेद के २३ वें अध्याय का १६ वाँ मन्त्र जिसे प्रत्येक मांगलिक कार्यारम्भ में पढ़ा जाता है। क्या कभी किसी बन्धु ने इस मन्त्र का अर्थ पढ़ा है? जब आप इस मन्त्र का महीधर महोदय का भाष्य पढ़ेंगे तो आप स्वयम् ही कहेंगे कि इस मन्त्र का पाठ मत करो। तो क्या वेद में ऐसी ही अनगरल बातें भरी पड़ी हैं? नहीं! इसमें दोष वेद का नहीं भाष्यकार की भावना का है। वेद भक्ति से प्रेरित होकर वेद भाष्य किया जा सकता है। यदि वेद भक्ति के साथ ज्ञान नहीं है तो वह भक्ति नहीं कुठाराघात हो जाता है। जिस प्रकार स्वामी भक्त बन्दर अपने स्वामी के सो जाने पर पास बैठा-बैठा स्वामी पर आकर बैठने वाली मक्खी उड़ा रहा है। मक्खी बार-बार परेशान करने लगी, बन्दर ने सोचा इसे तलवार से सफा कर दूँ। उसने म्यान से तलवार निकाली। उस समय मक्खी स्वामी की गरदन पर बैठी थी बन्दर ने एक हाथ मारा, मक्खी तो उड़ गई परन्तु स्वामी की गरदन ही साफ हो गई। बन्दर की स्वामी भक्ति में तो कोई कसर नहीं परन्तु ज्ञान शून्य होने के कारण कल्याण के स्थान पर अनर्थ हो गया। हमें ऐसी वेद भक्ति नहीं चाहिए। हमें ज्ञान पूर्वक वेद भक्ति चाहिए, जिसे पूरा किया वेद भक्त दयानन्द सरस्वती जी महाराज ने। हमने इसी पुस्तिका के प्रारम्भ में योगीराज अरविन्द की ऋषि के प्रति श्रद्धांजलि अंकित की है। आप उसे एक बार फिर पढ़ें और देखें वेद भाष्य के विषय में वह क्या कहते हैं। अब हम आपके सामने उपरोक्त मन्त्र तथा महीधर व्याख्या और ऋषि दयानन्द व्याख्या दोनों ही अंकित करते हैं। आप स्वयं ही तुलना करें, वास्तविकता किसमें है।

गणानां त्वा गणपति ँ हवामहे

इस मन्त्र में महीधर ने कहा है कि गणपति शब्द से घोड़े

का ग्रहण है। सो उल्टा अर्थ देखिये-सब ऋत्विजों के सामने यजमान की स्त्री घोड़े के पास सोवे और सोती हुई घोड़े से कहे कि हे अश्व ! जिससे गर्भ धारण होता है ऐसा जो तेरा वीर्य्य है उसको मैं खींच कर अपनी योनि में डालूँ तथा तू उस वीर्य्य को मुझमें स्थापन करने वाला है।

ऋषि दयानन्द की व्याख्या

हे जगदीश्वर ! हम लोग गणों के बीच गणों के पालन हारे आपको स्वीकार करते, अतिप्रिय सुन्दरों के बीच, अति प्रिय सुन्दरों के पालन हारे आपकी प्रशंसा करते, विद्या आदि पदार्थों की पुष्टि करने हारों के बीच विद्या आदि पदार्थों की रक्षा करने हारे आपको स्वीकार करते हैं। हे परमात्मन् ! जिस आप में सब प्राणी बसते हैं सो आप मेरे न्यायाधीश हूजिये, जिस गर्भ के समान संसार को धारण करने हारी प्रकृति को को धारण करने हारे आप जन्मादि दोष रहित भलीभांति प्राप्त होते हैं उस प्रकृति के धर्ता आपको मैं अच्छे प्रकार जानूं।

वेद विश्व के प्राचीनतम ग्रन्थ माने जाते हैं। इन्हें केवल आर्य समाज अथवा हिन्दु धर्म से जोड़े रखना उपयुक्त नहीं वेद का अर्थ ज्ञान है और ज्ञान को किसी जाति विशेष की चाहर दीवारी में बन्द करके नहीं रखा जा सकता। ज्ञान सम्पूर्ण मानव जाति के लिये होता है। अतः वेद भी समस्त विश्व की निधि है। परन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि अपनी स्वार्थ सिद्धि के लिये इसका मनमाना दोष पूर्ण भाष्य करके इसके महत्व को कम किया जाय। कहावत है, जो सूर्य के ऊपर धूल फैंक कर उसे छिपाना चाहते हैं वह धूल लौटकर उन्हीं के ऊपर आ गिरती है।' और हुआ भी यही। आज संसार महर्षि दयानन्द के यथार्थ और वास्तविक वेद भाष्य को देख कर उन अनगरल भाष्य करताओं के भाष्यों की ओर अंगुली उठाकर घृणित दृष्टि

से संकेत करते हुए कह रहा है 'इन्होंने वेद के ऊपर धूल फेंकी थी, अब वह धूल इन्हीं के ऊपर आ गिरी।' आर्य समाज के संस्थापक स्वामी दयानन्द ने विश्व की इस निधि को जन-जन तक पहुंचाने के लिये ही आर्य समाज की स्थापना की थी। वेदों के इस प्रकाण्ड पंडित का लक्ष्य था 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' अर्थात सारा संसार 'श्रेष्ठ' (आर्य) बने। तब आनन्दित होकर सब कहेंगे–

वेदम् शरणं आगच्छामि
सत्यम् शरणं आगच्छामि
यज्ञम् शरणं आगच्छामि

रामायण काल

वेद और सृष्टि काल की तरह रामायण काल को भी पाश्चात्य विद्वानों ने बिना सोच-विचार के ही ईसा से तीन चार सौ वर्ष पूर्व का कह दिया। जो नितान्त निर्मूल और निराधार है। श्री रामचन्द्र जी का जन्म त्रेता के अन्त में हुआ था। वायु पुराण ७०।४८ में लिखा है।

त्रेतायुगे चतुर्विंशे रावणस्तपसः क्षयात्।
रामं दाशरथिं प्राप्य सगणः क्षयमीयिवान्॥

अर्थात् आचार से पतित होने के कारण रावण चौबीसवें त्रेतायुग में दशरथनन्दन श्री राम के साथ युद्ध करके बन्धु बान्धवों सहित मारा गया।

इस श्लोक में श्री राम जी का काल वैवस्वत मन्वन्तर के चौबीसवें त्रेतायुग को माना है।

२४वें त्रेता से २८ वें त्रेता तक चार चतुर्युगियाँ व्यतीत हो चुकीं। एक चतुर्युगी में ४३ २० ००० वर्ष ×४= १,७२,८०,००० वर्ष और द्वापर के ८,६४ ००० वर्ष और अब तक के कलियुग के ५०७६ वर्ष यह सब मिलाकर १ ८१,४६,०७६ वर्ष हुए, यही

श्री रामचन्द्र जी का काल है। रामायण श्री रामचन्द्र जी का समकालीन इतिहास है। जिस समय श्री राम जी राज्यसिंहासन पर आसीन हो गये थे उस समय महर्षि वाल्मीकि ने अपने ऐतिहासिक महाकाव्य की रचना अनुष्टुप छन्द में की थी। अतः रामायण का समय भी इतना ही है।

कुछ व्यक्तियों की भ्रान्त धारणा है कि वाल्मीकि जी ने श्री राम जी के जन्म से दस हजार वर्ष पूर्व ही रामायण की रचना कर दी थी। जो सर्वथा मिथ्या धारणा है। वाल्मीकि ऋषि ने बालकाण्ड के प्रथम सर्ग के दूसरे श्लोक में लिखा है।

को न्वस्मिन् साम्प्रतं लोके गुणवान् कश्च वीर्यवान्
धर्मज्ञश्च कृतज्ञश्च सत्यवाक्यो दृढ़व्रतः ॥

भगवन्! इस समय इस संसार में गुणवान्, शूरवीर, धर्मज्ञ, कृतज्ञ, सत्यवादी और दृढ़-प्रतिज्ञ कौन है ?

'साम्प्रतम्'-जिसका अर्थ 'इस समय' वर्तमान काल से है भविष्य काल से नहीं।

पाश्चात्य लेखकों ने लिखा है कि पहले महाभारत लिखी गई और महाभारत के रामोपाख्यान के आधार पर वाल्मीकि रामायण की रचना हुई। इसीका अनुकरण करने वाले भारतीय भी रामायण को महाभारत के पश्चात् की ही रचना मानते हैं जो सर्वथा, मिथ्या, निर्मूल, निराधार और कपोल कल्पित है। यदि रामायण महाभारत के पश्चात् की रचना होती तो उसमें श्री कृष्ण जी अर्जुन आदि का उल्लेख होता। इसके विपरीत महाभारत के द्रोण पर्व के १४३। ६७-६८ श्लोक में महर्षि वाल्मीकि की रामायण के युद्ध काण्ड के ४२वें सर्ग का १८ श्लोक प्रायः शब्दशः उद्धृत किया गया है। इस संदर्भ में यह एक अकाट्य प्रमाण है।

वाल्मीकि रामायण न तो श्री रामचन्द्र जी से दस हजार

वर्ष पूर्व लिखी गई और न ही महाभारत के पश्चात् वास्तव में रामायण का रचना काल वही है जो हमने पूर्व लिखा है।

श्री राम जी नारायण (अवतार) नहीं थे। इसी सर्ग के ५ वें श्लोक में वाल्मीकि ऋषि ने नारद जी से कहा—

एतदिच्छाम्यहं श्रोतुं परं कौतूहलं हि मे।
महर्षे! त्वं समर्थोऽसि ज्ञातु मेवं विधं नरम् ॥

हे महर्षि! ऐसे गुणों से युक्त व्यक्ति के सम्बन्ध में जानने की मुझे उत्कट अभिलाषा है और आप इस प्रकार के 'मनुष्य' को जानने में समर्थ हैं।

इसमें 'नरम्' नर (मनुष्य) के ही विषय में बताने को कहा है और नारद जी ने भी उत्तर में कहा। (श्रूयतां नरः)

हे मुने! आपने जिन बहुत-से तथा दुर्लभ गुणों का वर्णन किया है उनसे युक्त 'मनुष्य' के सम्बन्ध में सुनिए-मैं सोच-विचार के साथ कहता हूँ।

नरः' नर। मनुष्य के ही विषय में कहा गया है। 'नारायण' के लिये नहीं। अतः स्पस्ट है श्री राम चन्द्र जी नर थे, नारायण नहीं।

इति

॥ ओ३म् ॥

शोध क्रम-१२

नव-सम्वत्

लेखक :—

वीरेन्द्र गुप्तः

आवास "वेद कुटी"

सिंह कालोनी, कटरा पूरन जाट

बाजार गंज, मुरादाबाद

वीरेन्द्र नाथ अश्विनी कुमार

प्रकाशन मन्दिर

मण्डी चौक, मुरादाबाद

मानव सृष्टि वेदकाल-१,९६,०८,५३०९४

विक्रम सम्वत्-२०५०

दयानन्दाब्द-१६९

१९९३ मूल्य-२)रु०

बन्धुओं !

वेदोक्त सिद्धान्त के प्रतिपादन एवं प्रसार हेतु आपके अवलोकनार्थ—

१–इच्छानुसार सन्तान
२–लौकिट उपन्यास
३–पुत्र प्राप्ति का साधन
४–पाणिग्रहण-संस्कार विधि
५–सीमित परिवार
६–गर्भावस्था की उपासना
७–नींव के पत्थर ८–बोध रात्रि ९ धार्मिक चर्चा १०–कर्म चर्चा ११–सस्ती पूजा १२–वेंद में क्या है ? १३–वेद की चार शक्तियाँ १४–कामनाओं की पूर्ति कैसे ? १५–यज्ञों का महत्व १६–ज्ञान दीप १७–How to beget a son १८–The light of laernning १९–दैनिक पंच महायज्ञ २०–दिव्य दर्शन २१–दस नियम २२–पतन क्यों होता है ? २३–विवेक कब जागता है ? २४–ज्ञान, कर्म, उपासना २५–वेद-दर्शन २६–वेदांग परिचय २७–सस्कार २८–निराकार-साकार के स्वरूप का दिग्दर्शन २९–मनुर्भव ३०–अदीनास्याम ३१--गायत्री साधन के पश्चात् ३२--नव-सम्वत् ज्ञानानुरागी महानुभावों के समक्ष प्रस्तुत किया है। आशा है पाठकगण वैदिक सिद्धान्तों को हृदयांगम कर मेरे प्रयास को सफल करेंगे।

॥ ओ३म् ॥

सूर्य्याचन्द्रमसौ धाता यथा पूर्वमकल्प यत् ।
दिवं च पृथिवीं चान्तरिक्षमथो स्वः ॥

ऋग्वेद १०।१९०।३

विधाता ने पहले कल्प जैसे सूर्य, चन्द्र, द्युलोक, पृथ्वीलोक और अन्तरिक्ष तथा उसमें फिरने वाले सब लोक-लोकान्तर बनाये ।

नव सम्वत् चैत्र शुक्ल प्रतिपदा से प्रारम्भ होता है। इसी दिन से विक्रम सम्वत्, शक सम्वत्, युधिष्टिर सम्वत् आर्य समाज स्थापना सम्वत्, युग सम्वत्, मानव सृष्टि और वेद सम्वत् और सृष्टि रचना सम्वत् भी प्रारम्भ होता है। सृष्टिकाल को ब्रह्म दिन और प्रलयकाल को ब्रह्मरात्रि कहते हैं। ब्रह्मदिन ४ अरब ३२ करोड़ वर्ष का होता है और ब्रह्मरात्रि भी इतने ही समय की होती है। ब्रह्मदिन को एक हजार चतुर्युगियों में बाँटा गया है। सत्युग, त्रेता, द्वापर, कलियुग यह चारों युग मिलकर एक चतुर्युगी होती है।

सत्युग	:	१७ लाख २८ हजार वर्ष का होता है।
त्रेता	:	१२ लाख ९६ हजार वर्ष का होता है।
द्वापर	:	८ लाख ६४ हजार वर्ष का होता है।
कलियुग	:	४ लाख ३२ हजार वर्ष का होता है।
एक चतुर्युगी में	:	४३ लाख २० हजार वर्ष होते हैं।
एक मनवन्तर	:	७१ चतुर्युगियों का होता है।

१४ मनवन्तर की एक मानव सृष्टि होती है।

मनवन्तरों के नाम-१-स्वायंभव, २-स्वरोचिष, ३-औत्तमि ४-तामस, ५-रैवत, ६-चाक्षुष,७-वैवस्वत, ८-स्वावर्णिक,९-दक्ष सावर्णि, १०-ब्रह्म सावर्णि, ११-धर्म सावर्णि,१२-सावर्णि,१३-रुचि, १४-भौम। १४ मनवन्तरों को ७१ चतुर्युगियों से गुणा करने पर ९९४ चतुर्युगियों में मानव रहता है। एक हजार चतुर्युगियों में से शेष ६ चतुर्युगियों में से तीन चतुर्युगियों का समय सृष्टि के प्रारम्भिक दिन से मानव सृष्टि होने के दिन तक सृष्टि रचना में लगता है, इसी प्रकार मानव की प्रलय के दिन से तीन चतुर्युगियों का समय शेष सृष्टि के सम्पूर्ण विलय होने में लगता है।

प्रकृति का नियम है, जिस वस्तु के निर्माण में जितना समय लगता है उतना ही समय उसके नष्ट होने में लगता है। उसके प्रत्येक क्रम में व्यतिक्रम कभी नहीं होता। कुछ विद्वानों का मत है कि प्रत्येक मनवन्तर के पश्चात् सन्धिकाल आता है और कुछ का मत है प्रत्येक चतुर्युगी के पश्चात् भी सन्धिकाल आता है। कोई यह भी कह सकता है कि प्रत्येक युग के पश्चात् भी सन्धिकाल आता है, तो क्या यह मानने योग्य बात होगी? नहीं। विचारना होगा कि सन्धिकाल का क्या प्रयोजन है। हम नित्य प्रातः सायं प्रत्यक्ष रूप से देखते हैं रात्रि की समाप्ति के पश्चात् ब्रह्ममुहूर्त की सन्धि वेला को जिसके पश्चात् उदित होता है प्रभात, इसी प्रकार दिन की समाप्ति पर सायंकाल की सन्धि वेला को जिसके पश्चात् रात्रि का आगमन होता है।

पौराणिक बन्धु त्रिकाल सन्धि मानते हैं, वे मध्यान्ह को भी सन्धि मानते हैं जो प्रत्यक्ष में सन्धि नहीं, इसी कारण ऋषि दयानन्द सरस्वती जी महाराज ने त्रिकाल सन्धि का निषेध कर

प्रत्यक्ष दीखने वाली दो सन्धिकाल को ही माना है। वास्तव में सन्धिकाल दो ही होते हैं, मध्य में कोई सन्धि नहीं होती।

दिनमान पूरा ६० घड़ी अर्थात् २४ घण्टे का होता है उसी में दोनों सन्धिकाल होते हैं उनका समय २४ घण्टे के अन्दर ही होता है, अलग से कोई समय नहीं होता। जब ब्रह्मरात्रि के पश्चात् ब्रह्म दिन का उदय होता है तो उस समय तीन चतुर्युगियों के समय का सन्धिकाल हुआ था और जब ब्रह्म दिन की समाप्ति के पश्चात् ब्रह्म रात्रि का आगमन होगा तो उस समय पर भी तीन चतुर्युगियों के समय का सन्धिकाल होगा। मध्य में कोई सन्धिकाल नहीं होता। इस प्रकार ९९४ चतुर्युगियों का समय मानव जीवन का है, उसमें तीन चतुर्युगियाँ पूर्व सन्धि-काल की और तीन चतुर्युगियाँ पश्चात् अर्थात् अन्त सन्धिकाल को मिलाकर कुल एक हजार चतुर्युगियों का एक ब्रह्म दिन अर्थात् ४ अरब ३२ करोड़ वर्ष का होता है, इसी प्रकार ब्रह्मरात्रि भी इतने ही समय की होती है।

अब तक ६ मनवन्तर व्यतीत हो चुके हैं. सातवें वैवस्वत मनवन्तर की २७ चतुर्युगियाँ भी व्यतीत हो चुकी हैं, २८वीं चतुर्युगी के सत्युग, त्रेता, द्वापर भी व्यतीत हो चुके हैं, कलियुग के ५०९३ वर्ष व्यतीत हो चुके हैं। उक्त तथ्यों को सभी ज्योतिष-कार स्वीकार करते हैं और जो युगों की गणना हम पूर्व लिख आये हैं। उसे भी स्वीकार करते हैं, परन्तु आश्चर्य यह है कि उसे आज तक जोड़कर देखने का कष्ट किसी ने भी नहीं किया, न जाने किसने किस भूल से मानव सृष्टि सम्वत् १,९५,५८,८५,०९३ छाप दिया, उसी को सही मान कर सब आज तक वही छापते चले आ रहे हैं जो नितान्त गलत है।

श्रीमती कमला भार्गव द्वारा तेज कुमार प्रेस (प्रा०) लिमिटेड, लखनऊ में मुद्रित पञ्चांग सम्वत् २०४९ में मैंने देखा है–उसमें लिखा है ६ मन्वन्तर व्यतीत हो चुके सातवें वैवस्वत मनवन्तर की २७ चतुर्युगी व्यतीत हो चुकीं। २८वीं के कलिकाल के ५०९३ वर्ष व्यतीत हो चुके हैं परन्तु सृष्टि सम्वत् वही गलत छापा है १,९५,५८,८५,०९३।

सम्पादक–ज्योतिषाचार्य पं० हीरालाल मिश्र पञ्चांग कार्यालय काशी हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी-५। इन दोनों को मैंने ६।७।९२ तथा ५।८।९२ को पत्र लिखे परन्तु आज तक कोई उत्तर नहीं मिला।

अब हम आपके अवलोकनार्थ सारा जोड़ आपके सामने प्रस्तुत करते हैं। आप इसके द्वारा सही सृष्टि रचना सम्वत् एवं मानव सृष्टि सम्वत् जोड़ कर निकाल सकते हैं।

एक चतुर्युगी	४३,२०,०००	४३ लाख २० हजार वर्ष
तीन चतुर्युगी से गुणा	३	
	१,२९,६०,०००	

१ करोड़ २९ लाख ६० हजार वर्ष

एक चतुर्युगी	४३,२०,०००
२७ चतुर्युगी से गुणा	२७
	११,६६,४०,०००

११ करोड़ ६६ लाख ४० हजार वर्ष

एक चतुर्युगी में	४३,२०,०००	४३लाख २०हजार वर्ष
एक मनवन्तर	७१	चतुर्युगियों से गुणा
एक मनवन्तर का समय	३०,६७,२०,०००	३० करोड़ ६७ लाख २० हजार वर्ष
६ मनवन्तर	× ६	जो व्यतीत हो चुके
	१,८४,०३,२०,०००	१ अरब ८४ करोड़ ३ लाख २०हजार वर्ष
२७ चतुर्युगियाँ जो व्यतीत हो चुकीं	११,६६,४०,०००	११ करोड़ ६६ लाख ४० हजार वर्ष
सत्युग	१७,२८,०००	१७ लाख २८ हजार वर्ष
त्रेता	१२,९६,०००	१२ लाख ९६ हजार वर्ष
द्वापर	८,६४,०००	८ लाख ६४ हजार वर्ष
कलियुग के	५,०९३	५ हजार ९३ वर्ष
मानव एवं सृष्टि एवं वेद काल	१,९६,०८,५३,०९३	१ अरब ९६ करोड़ ८ लाख ५३ हजार ९३ वर्ष
पूर्व सन्धिकाल	+१,२९,६०,०००	१ करोड़ २९ लाख ६० हजार वर्ष
सृष्टि रचना काल	१,९७,३८,१३,०९३	१ अरब ९७ करोड़ ३८ लाख १३ हजार ९३ वर्ष

६ मन्वन्तरों का व्यतीत हो जाना, सातवें मन्वन्तर की २७ चतुर्युगियों का व्यतीत हो जाना, २८वीं चतुर्युगी के सत्युग, त्रेता, द्वापर का व्यतीत हो जाना तथा कलियुग के ५०९३ वर्ष व्यतीत होना सभी को स्वीकार है, गुरुदेव दयानन्द सरस्वती जी महाराज भी इसे स्वीकार करते हैं और इसका पूरा विवरण ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका ग्रन्थ में अंकित किया है।

मेरा सभी विद्वानों, ज्योतिषियों, भविष्य वेत्ताओं, पंचांग तैयार कर प्रकाशित करने वालों और सृष्टि सम्वत् छापने वालों आदि सभी से करबद्ध विनम्र निवेदन है कि त्रुटिपूर्ण मानव सृष्टि सम्वत् जो १,९५,५८,८५,०९३ तथा सृष्टि सम्वत् १,९७,२९,४९,०९३ जिसे आप अब तक छापते रहे हैं, उसे त्याग कर सही मानव सृष्टि सम्वत् १,९६,०८,५३,०९३ है एवं तीन चतुर्युगी पूर्व सन्धिकाल की जोड़ कर सृष्टि रचना काल १,९७,३८,१३,०९३ है इनको स्वीकीर कर प्रकाशित कर गणित की भूल का सुधार करने की कृपा करें।

चैत्र प्रतिपदा बुधवार २४ मार्च १९९३ को बदल कर नव-वर्ष के रूप में विक्रम सम्वत् २०५० तथा कलियुग ५०९४ तथा मानव सृष्टि वेदकाल १,९६,०८,५३,०९४ एवं सृष्टि रचना काल १,९७,३८,१३,०९४ एवं आर्य समाज स्थापना सम्वत् ११८ हो जायगा। पूर्ण वर्ष में यही दिन सर्व श्रेष्ठ और शुभ दिन है।

कियता स्कम्भः प्रविवेश भूतं कियद् भविष्यदन्वाशयेस्य।
एकं यदंगमकृणोत्सहस्रधा कियता स्कम्भः प्रविवेश तत्र॥

अथर्ववेद १०।७।९

अर्थात् भूत भविष्यमय कालरूपी घर, एक सहस्र खम्भों पर

खड़ा किया गया है। इन खम्भों के अलंकार से एक कल्प में होने वाली एक सहस्र चतुर्युगियों का वर्णन किया है।

शतं ते अयुतं हायनान्द्वे युगे त्रीणि चत्वारि कृण्मः।

अथर्ववेद ८।२।२१

अर्थात् सौ अयुत वर्षों के आगे दो, तीन और चार की संख्या लिखने से कल्पकाल निकल आवेगा। एक अयुत दस हजार का होता है, इसलिए सौ अयुत दस लाख बने। दस लाख के सात शून्य (बिन्दु) लिखकर उनके पहले दो, तीन, चार लिखने से ४,३२,००,००,००० (४ अरब ३२ करोड़ वर्ष) होते हैं, यह संख्या एक हजार चतुर्युगियों के वर्षों की है, इसको एक ब्रह्म दिन या एक कल्प की संख्या कहते हैं।

कृतायादिनवदर्शं त्रेतायै कल्पिनं
द्वापरायाधिकल्पिनम् आस्कन्दाय सभास्थाणुम्।

यजुर्वेद ३०।१८

इस मन्त्र में चारों युगों के नामों का संकेत मिलता है।

कृताय सभाविनम् त्रेताया आदिनवदर्शं
द्वापराय बहिस्सदं कलये सभास्थाणुं।

तैत्तिरीय ब्राह्मण ४।३।१

इसमें स्पष्ट किया है, कृताय, त्रेताया, द्वापराय, कलये।

युगों का समय शतपथ ब्राह्मण १०।४।२।२२-२५ में बड़ी विचित्रता से बतलाया गया है। वहाँ अग्निचयन प्रकरण में लिखा है कि ऋग्वेद के अक्षरों से प्रजापति ने १२००० बृहती

छन्द बनाये, प्रत्येक बृहती छन्द ३६ अक्षर का होता है, अर्थात् ऋग्वेद के कुल अक्षर ४३२००० हुए, इसी प्रकार यजुर्वेद के ८००० और सामवेद के ४००० मिलकर कुल १२००० के भी वही ४३२००० अक्षर हुए यही आयु कलियुग की भी इतने ही वर्ष की है। (वैदिक सम्पत्ति)

युगों की गणना उलटी प्रतीत होती है, त्रेता के पश्चात् द्वापर आया है। 'त्रै' तीन को कहते हैं और 'द्वै' दो को कहते हैं तो पहले तीन कैसे और दो बाद में क्यों ? इस बात को समझाने के लिये विद्वानजन यही कहते हैं कि सत्युग में सत्य ही सत्य था अर्थात् सम्पूर्ण सत्य का ही व्यवहार था, त्रेता में एक भाग असत्य और तीन भाग सत्य का व्यवहार था, द्वापर में दो भाग असत्य और दो भाग सत्य का व्यवहार हो गया था, इस कारण से पहले त्रेता बाद में द्वापर आता है, परन्तु अपनी समझ में यह बात नहीं आई। वास्तविकता कुछ और है, जितनी आयु कलियुग की है, उससे दुगुनी आयु द्वापर की है। तिगुनी आयु त्रेता की है और चौगुनी आयु सत्युग की है। इस कारण कलियुग एक गुना इससे द्वापर दुगुना, त्रेता तिगुना और सत्युग चौगुना होता है इसलिए सत्युग को कृते भी कहते हैं, कृते चार को कहते हैं। इस प्रकार युगों की गणना उलटी नहीं सही है।

उपयामगृहीतो ऽसि मधवे त्वो
पयामगृहीतो ऽसि माधवाय त्वो
पयामगृहीतो ऽ सि शुक्राय त्वो
पयामगृहीतो ऽ सि शुचये त्वो
पयामगृहीतो ऽ सि नभसे त्वो
पयामगृहीतो ऽ सि नभस्याय त्वो
पयामगृहीतो ऽ सीषे त्वो
पयामगृहीतो ऽ स्यूर्जे त्वो
पयामगृहीतो ऽ सि सहसे त्वो
पयामगृहीतो ऽ सि सहस्याय त्वो
पयामगृहीतो ऽ सि तपसे त्वो
पयामगृहीतो ऽ सि तपस्याय त्वो
पयामगृहीतो ऽस्य ँहसस्पतये त्वा ॥

यजुर्वेद ७।३०

इस वेद मन्त्र में १२ मासो के नामों की चर्चा है साथ में मलमास की भी चर्चा है.इसे शतपथ ब्राह्मण ने और स्पष्ट किया है।

१–वसन्तिकौ तावृतू । मधुश्च माधवश्च ।
२–ग्रैष्मौ तावृतू । शुक्रश्च शुचिश्चा ।
३–वार्षिकौ तावृतू । नभश्च नभस्यश्च ।
४–शारदौ तावृतू । इषश्च ऊर्जश्च ।
५–हेमन्तिकौ तावृतू । सहश्च सहस्यश्च ।
६–एतौ एव शैशिरौ । तपश्च तपस्यश्च ।

ऋतु नाम	वेद मास नाम	प्रचलित मास नाम
१–वसन्त	मधु, माधव	चैत्र, वैषाख
२–ग्रीष्म	शुक्र, शुचि	ज्येष्ठ, आषाढ़
३–वर्षा	नभस्, नभस्य	श्रावण, भाद्र
४-शरद्	इष, ऊर्ज	आश्विन, कार्तिक
५–हेमन्त	सहस्, सहस्य	मार्गशीर्ष, पौष
६–शिशिर	तप, तपस्य	माघ, फाल्गुन
७–	अहंसस्पति	मलमास

इस प्रकार छः ऋतुओं के १२ मास का एक वर्ष बनता है, वर्ष के दो पक्ष होते हैं–एक 'उत्तरायन' जिसमें प्रारम्भ की तीन ऋतुऐं होती हैं और दूसरा 'दक्षिणायन' जिसमें अन्त की तीन ऋतुएँ होती हैं। यह ऋतुएँ सूर्य की पृथ्वी द्वारा परिक्रमा करने से बनती है।

संक्रान्ती सूर्य मास का वर्ष-३६५ दिन ८ घण्टे का होता है।

कैलेण्डर मास का वर्ष–३६५ दिन का होता है।

चन्द्र मास का वर्ष–३५५ दिन का होता है।

चन्द्रमा की एक मास की चाल २९ दिन ४ घण्टे के लगभग की है।

कैलेण्डर वर्ष को सूर्य मास संक्रान्ति के साथ जोड़ने की दृष्टि से प्रत्येक तीसरे वर्ष फरवरी के मास में एक दिन बढ़ाकर उस वर्ष में ३६६ दिन करके उसे सूर्य मास के समानान्तर कर लेते हैं। सूर्य मास के तीन वर्षों में पृथ्वी की चन्द्रमा ३७ परिक्रमायें में लगाता है इस कारण प्रत्येक तीसरे वर्ष एक मलमास बन जाता है। अमावस्या के पश्चात् प्रतिपदा से लेकर अगली अमावस्या तक के बीच में जिस मास में संक्रान्ति नहीं आती वही मास मलमास बन जाता है।

अमावस्या के पश्चात् की प्रतिपदा से चन्द्रकला की वृद्धि से एक-एक दिन की गणना होती रहती है और पौर्णमासी तक अर्थात् चन्द्रमा के पूर्ण हो जाने से शुक्ल पक्ष बन जाता है इसके पश्चात् की प्रतिपदा से चन्द्रकला के घटने से एक-एक दिन की गणना होती रहती है जिसे कृष्णपक्ष कहते हैं और अमावस्या के दिन मास पूर्ण हो जाता है। पंचांगों में भी पौर्णमासी के दिन १५ का अक लिखा जाता है और अमावस्या के दिन ३० का अंक लिखा जाता है। इससे स्पष्ट है कि मास का प्रारम्भ शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा से ही होता है, दूसरे मानसरोवर झील के किनारे पर एक वनस्पति होती है, उसका नाम 'सोमबल्ली' है। उस पर अमावस्या के दिन कोई पत्ता नहीं होता उसके अगले दिन प्रतिपदा के प्रतीक रूप में एक पत्ते के मूल में लगी टहनी होती है वह उगती है, उसके अगले दिन बारीक चन्द्रमा के समान उसी आकार का पत्ता निकलता है, इस प्रकार जितना-जितना चन्द्रमा की वृद्धिकला का आकार होता जाता है उसी आकार का नया पत्ता उदित होता रहता है और पौर्णमासी के दिन पूरा गोल पत्ता उदित होता है, उसके अगले दिन पूर्ण गोल पत्ता गिर जाता है, उसी प्रकार जैसे-जैसे चन्द्रमा की कला घटती जाती है

उसी प्रकार उसका पत्ता भी गिरता चला जाता है और अमावस्या के दिन उस पर कोई पत्ता नहीं होता। अगले दिन से फिर वही प्रक्रिया आरम्भ हो जाती है। ऐसे ही अमावस्या के अगले दिन शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा के दिन से ही मास के प्रारम्भ होने को प्रमाणित करता है।

उक्त सभी तथ्यों से यह स्पष्ट और सत्य सिद्ध है कि सृष्टि की रचना चैत्र शुक्ल प्रतिपदा को ही हुई थी। इसी दिन ही सर्वप्रथम मानव का अवतरण और वेद के ज्ञान का उदय हुआ था।

सप्ताह में सात दिन होते हैं जिस दिन सृष्टि की उत्पत्ति हुई उस समय मानव ने ब्रह्ममुहूर्त के प्रथम प्रभात में पूर्व दिशा की ओर से उदित होते हुए प्रकाश के पुञ्ज सूर्य के सब ने दर्शन किये, 'सूर्य' को 'रवि' भी कहते हैं इस लिए इस दिन का सम्बोधक नाम 'रविवार' रखा गया, अगले दिन सायकाल के समय पश्चिम दिशा में दूज के चन्द्रमा की रेखा को देखकर इस दिन का सम्बोधक नाम 'चन्द्रवार' रखा गया, चन्द्रमा को सोम भी कहते हैं इस कारण 'सोमवार' भी कहा जाता है। अगले दिन भूमि पर उगे हुए नाना प्रकार के सुन्दर और स्वादु पदार्थों को देखकर आनन्दित हो उठे, इस कारण इस दिन का सम्बोधक नाम 'भौमवार' रखा गया, समस्त पदार्थों को प्रदान करने वाली और मंगलकारी होने से इसे 'मंगलवार' भी कहते हैं। अगले दिन बुद्धि का विकास हुआ इस कारण इस दिन का सम्बोधक नाम 'बुद्धवार' रखा गया। अगले दिन अग्नि, वायु, आदित्य, अंगिरा ऋषियों के द्वारा वेद ज्ञान सुना और यहीं से

गुरु-शिष्य की परम्परा का जन्म हुआ इसी कारण इस दिन का सम्बोधक नाम 'गुरुवार' रखा गया अगले दिन शुक्र की जागृति होने लगी। स्त्री-पुरुष के सम्पर्क की इच्छा होने से इस दिन का सम्बोधक नाम 'शुक्रवार' रखा गया। अगले दिन स्वार्थ वृत्ति की भावना उमड़ पड़ी, तेरा मेरा होने लगा, बुद्धियों पर तामस-पन छाने लगा, तमोगुण की अधिकता के कारण क्रोध की मात्रा बढ़ने लगी इसी कारण इस दिन का सम्बोधक नाम तमोगुण सूचक 'शनिवार' रखा गया।

इस प्रकार मनवन्तर से लेकर दिन तक का सम्पूर्ण विवरण आपके अवलोकनार्थ प्रस्तुत किया गया है।

सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिये।

महर्षि दयानन्द सरस्वती

इसका स्पष्ट मन्तव्य है कि जिसे हम सत्य मानकर जीवन भर अपनाते रहे और यदि वह किसी भी प्रकार कसौटी पर सत्य नहीं उतर रहा है तो हमें उसे उसी समय त्याग कर सत्य को ही नि:संकोच ग्रहण कर लेना चाहिये। यही एक महानता है।

पुरोहितों से निवेदन है कि वरण के समय पर सही सृष्टि सम्वत् का उच्चारण किया करें। अनुचित सृष्टि सम्वत् के उच्चारण का दोष पुरोहित को ही लगेगा क्योंकि हो सकता है कि यजमान इससे अनभिज्ञ हो।

सम्वत्सर नामावली

१-प्रभवः
२-विभवः
३-शुल्क
४-प्रमोदः
५-प्रजापति
६-अंगिराः
७-श्री मुखः
८-भावः
९-युवा
१०-धाता
११-ईश्वरः
१२-बहुधान्य
१३-प्रमाथो
१४-विक्रम
१५-वृषः
१६-चित्रभानु
१७-सुभानूः
१८-तारणः
१९-पार्थिव
२०-व्ययः
२१-सर्वजीत
२२-सर्वधारी
२३-विरोधा
२४-विकृति
२५-स्वरः
२६-नन्दनः
२७-विजयः
२८-जयः
२९-मन्मथः
३०-दुर्मुखः
३१-हेमलवः
३२-विलम्वः
३३-विकारी
३४-सर्वरी
३५-प्लवः
३६-शुभकृत्
३७-शोभनः
३८-क्रोधी
३९-विश्वावशु
४०-पराभव
४१-स्त्रवंग
४२-कोलक :
४३-सौम्यः
४४-साधारण
४५-विरोध कृत्
४६-परिधावी
४७-प्रमांदी
४८-आनन्द
४९-राक्षसः
५०-नलः
५१-पिंगलः
५२-कालयुक्त
५३-सिद्धार्थ
५४-रौद्रः
५५-दुर्मति
५६-दुन्दुभिः
५७-रुधिद्गारी
५८-रक्ताक्षः
५९-क्रोधनः
६०-क्षयः

यह सम्वत्सर नामावली वेद से सम्बन्धित नहीं है। विक्रम सम्वत् २०५० का नाम २० 'व्ययः' है। इसी प्रकार क्रम से सम्वत्सरों के नाम चलते रहते हैं।

नासदासीन्नो सदासीत्तदानीं
नासीद्रजो नो व्योमा परो यत् ।
किमावरीवः कुह कस्य शर्मन्नम्भः
किमासीद्गहनं गभीरम् ॥

ऋग्वेद १०।१२६।१

(तदानीम्) इस जगत् के उत्पन्न होने के पूर्व (न असत् आसीत्) न असत् था अर्थात् स्वरूपवान् न होने से अस्वरूपवान बन जाता है, अस्वरूपवान होने से दृश्यमान नहीं होता इस कारण से असत् ही प्रतीत होता है जबकि वह कारण रूप में विद्यमान है।(नो सत् आसीत्) और न सत् था अर्थात् स्वरूपवान होना ही सत् है क्योंकि वह दीखता है और हम देख रहे हैं, जो देख रहे हैं वह भी सत् होते हुए भी अस्वरूपवान होने के कारण से न था और वह कारणरूप में विद्यमान है। (न रजः आसीत्) उस समय नाना लोक भी न थे। (नो व्योम) न आकाश था अर्थात् जो आकाश हमें दीख रहा है वह भी न था। (यत् परः) जो उससे भी परे है वह भी न था। उस समय (किम् आ अवरीवाः) क्या पदार्थ सबको चारों ओर से घेर सकता था ? (कुह) वह सब फिर कहाँ था और (कस्यशर्मन्) किसके आश्रय में था। तो फिर (किम्) क्या (गहनं गभीरं अम्भः आसीत्) गहन और गम्भीर का समुद्री जल तो कहाँ था।

वेदं शरणम् आगच्छामि
सत्यं शरणम् आगच्छामि
यज्ञं शरणम् आगच्छामि

सूर्यगुणी

पुत्रदाता औषधि

इस प्रभावयुक्त दिव्यौषधि का
गर्भावस्था के ८१ से ८५
दिन के मध्य में सेवन करने
से पुत्र ही प्राप्त होता है।

वेद-दर्शन
हिन्दी टीका सहित अनुपम ग्रन्थ — मूल्य १८०/-

इच्छानुसार सन्तान
मनचाही पुत्र-पुत्री, धर्मात्मा, शासक, जितेन्द्रिय और गौर वर्ण की सन्तान प्राप्त करना। — मूल्य २५/-

पुत्र प्राप्ति का साधन
पुत्र की प्राप्ति के लिए मार्ग-दर्शन। — मूल्य ४/-

गर्भावस्था की उपासना
गर्भित बालक के संस्कार बनाना। — मूल्य /२५

दस नियम
आर्य समाज के नियमों की सरल भाषा में विस्तार से व्याख्या। — मूल्य ७/-

दैनिक पंच महायज्ञ
नित्य कर्म विधि। — मूल्य ३/-

HOW TO BEGET A SON
Science of begetting child of choice. — Price 25/-

निराकार साकार के स्वरूप का दिग्दर्शन — मूल्य २/-

मनुर्भव — मूल्य २/-

अदीनास्याम — मूल्य २/-

गायत्री साधन — मूल्य ५/-

नव-सम्वत् — मूल्य २/-

वीरेन्द्र नाथ अश्विनी कुमार
प्रकाशन मन्दिर, मण्डी चौक, मुरादाबाद

वेद-दर्शन

ऐसा उपयोगी एवं वैज्ञानिक अनुसन्धानात्मक अन्वेषक ग्रन्थ जो मानव हृदयों को अपनी ओर आकर्षित करने में अपना विशेष स्थान रखता है। इतना उपयोगी ग्रन्थ आज तक प्रकाशित नहीं हुआ।

इसमें

प्रभु को मित्रता, दाम्पत्य, संजीवन, पुत्रेष्टि, सरस्वती, श्री, वाणिज्य, रक्षा, चरित्र जीवननिर्माण, राष्ट्र, संसार की दृष्टि में वेद आदि विषय अंकित है। वास्तव में यह अवलोकनीय ग्रन्थ है।

लेखक-वीरेन्द्र गुप्त:
सज्जा–आकर्षक जिल्द
मूल्य-१८० रुपये

पृष्ठ-३८४
साइज–१४×२२ से०मीटर
पोस्टेज-अतिरिक्त।

आप भी मंगवाकर अवलोकन कोजिये।

वीरेन्द्र नाथ अश्विनी कुमार
प्रकाशन मन्दिर, मण्डी चौक
मुरादाबाद–२४४००१

राज प्रिन्टर्स, मुरादाबाद

॥ ओ३म् खं ब्रह्म ॥

बोध क्रम—३४

विवेकशील बच्चे

लेखक :

वीरेन्द्र गुप्तः

प्रकाशक :-

वेद संस्थान

मण्डी चौक, मुरादाबाद

निःशुल्क भेंट

श्री रामलाल जी आर्य जलेसर वालों के सौजन्य से

प्राप्ति स्थान :-

वीरेन्द्र नाथ अश्विनी कुमार

प्रकाशन मन्दिर, मण्डी चौक

मुरादाबाद—२४४००१

मानव सृष्टि वेदकाल—१,९६,०८,५३,०९६

विक्रम सम्वत्—२०५२

दयानन्दाब्द—१७१

१९९५

[दो हजार

बन्धुओं !

वेदोक्त सिद्धान्त के प्रतिपादन एवं प्रसार हेतु आपके अवलोकनार्थ–

बीरेन्द्र गुप्त॥

१-इच्छानुसार सन्तान
२–लौकिट उपन्यास
३–पुत्र प्राप्ति का साधन
४–पाणिग्रहण-संस्कार विधि
५–सीमित परिवार
६–गर्भावस्था की उपासना
७–नींव के पत्थर ८–बोध रात्रि ९–धार्मिक चर्चा १०–कर्म चर्चा ११–सस्ती पूजा १२–वेद में क्या है ? १३–वेद की चार शक्तियाँ १४–कामनाओं की पूर्ति कैसे ? १५–यज्ञों का महत्व १६–ज्ञान दीप १७–How to beget a son १८-The light of laernning १९–दैनिक पंच महायज्ञ २०–दिव्य दर्शन २१–दस नियम २२–पतन क्यों होता है ? २३–विवेक कब जागता है ? २४–ज्ञान, कर्म, उपासना २५–वेद-दर्शन २६-वेदांग परिचय २७–संस्कार २८–निराकार साकार के स्वरूप का दिग्दर्शन २९–मनुर्भव ३०–अदोनास्याम ३१–गायत्री साधन ३२–नव सम्वत् ३३–आनुषक् के पश्चात् ३४–विवेक शील बच्चे ज्ञानानुरागी महानुभावों के समक्ष प्रस्तुत किया है। आशा है पाठकगण वैदिक सिद्धान्तों को हृदयांगम कर मेरे प्रयास को सफल करेंगे।

॥ ओ३म् ॥

अर्थम् इद वा उ अर्थिनः ।

ऋग्वेद १।१०५।२

उद्यमी अपने ध्येय को पा लेते हैं ।

अपंग, मन्द बुद्धि, गूंगे, बहरे आदि बच्चे सब जगह पाये जाते हैं, उसके लिए यह आवश्यक नहीं कि वह निर्धन के यहाँ ही जन्म लेते हों, वह धनवान के घर भी जन्म लेते हैं। ऐसे बच्चे विकासशील, विकासोन्मुख और अविकसित देशों आदि में भी जन्म लेते हैं। इस प्रकार के बच्चों के जन्म लेने का सारा श्रेय केवल माता-पिता को ही जाता है।

यहाँ पर यह प्रश्न उठता है कि इस प्रकार के बच्चे क्यों जन्म लेते हैं ? किस कारण से ऐसा होता है ? इसमें माता-पिता का क्या दोष है ?

मानव अपने जीवन उपयोगी समस्त क्रिया कलाप योजना के अनुसार ही बनाता है, पहले योजना तैयार होती है पश्चात् कार्य आरम्भ होता है। यह नहीं होता कि पहले कार्य आरम्भ कर दिया जाये पश्चात् योजना तैयार की गई। ऐसा कभी नहीं होता। स्पष्ट है कि बिना योजना के कोई भी कार्य सफल नहीं होता। जब हम कोई भवन, वस्त्र, आभूषण आदि कुछ भी तैयार करना या कराना चाहते हैं तो हम पहले अपने घर परिवार में

विचार करते हैं, पश्चात् मित्रों से और नातेदारों से भी परामर्श लेते हैं तत्पश्चात् सब के विचारों का समन्वय करके अपनी योजना बनाकर कार्य करते हैं, आँख मूंदकर बिना विचार के कोई भी कार्य आरम्भ नहीं करते।

हम यह सब जानते हैं कि बिना योजना के कोई कार्य सफल नहीं होता। अब मेरा आपसे प्रश्न है कि क्या वास्तव में आप यह जानते और मानते हैं कि बिना योजना के कोई भी कार्य सफल नहीं हो पाता ? आप उत्तर देंगे, हाँ यह बिल्कुल सत्य है। अब मेरा अगला प्रश्न है—क्या आपने अपनी अर्द्धांगिनी के साथ बैठकर कभी गम्भीरता के साथ यह विचार किया कि हमको कैसी सन्तान चाहिए ? मैं जानता हूँ आपका उत्तर मौन ही होगा, इसके अलावा और कुछ नहीं हो सकता। हाँ, आपने कोई बहुत ऊँची उड़ान लगाई तो आप यह कह सकते हैं कि इस विषय में हम कुछ नहीं जानते, यह तो ईश्वरीय लीला है इसे वही जान सकता है। गलती आप करें और जाने ईश्वर ? यह कैसे हो सकता है। जब भवन, वस्त्राभूषणादि बिना योजना के अच्छे सुन्दर सुखदायी नहीं बन सकते तो बिना योजना के अच्छी सन्तान कैसे बन सकती है। वास्तविकता यही है कि हम सन्तति के निर्माण पर कोई ध्यान नहीं देते, वह तो विषयानन्द के मध्य बिना योजना के ही उपस्थित हो जाती है। जब हमारे घर पर कोई अतिथि आता है तो हम कुछ घर की स्वच्छता पर ध्यान देते हैं और यदि कोई बहुत बड़ा अतिथि आता है तो स्वच्छता के साथ-साथ घर की समस्त वस्तुओं को यथा स्थान सजाकर रखते हैं और अतिथि के स्वागत के लिए प्रसन्न चित्त होकर स्वच्छ वस्त्र धारण कर तैयार रहते हैं। जो कुछ ही क्षणों के लिये आता है। इसी प्रकार आपने सन्तान जैसे उत्तम स्थायी सदैव साथ रहने

वाले अतिथि के स्वागत के लिये अपने मन, मस्तिष्क, भोजन, क्रिया, विचार और शारीरिक दोषों से शुद्धि की है ? आपका उत्तर होगा, नहीं। जब मन शुद्ध नहीं, विचार शुद्ध नहीं, रजः वीर्य शुद्ध नहीं तो ऐसे गन्दे स्थान पर क्या कोई दिव्य आत्मा अतिथि के रूप में आना स्वीकार करेगी ? नहीं। ऐसे स्थान पर तो मच्छर भुनगे ही आकर वास करेंगे। ऐसी सन्तान उक्त दोषों से युक्त हो तो आश्चर्य क्या ?

एक अनपढ़ किसान यह जानता है कि मुझे बीज बोने के लिये कैसी भूमि चाहिये ? वह हल और पटेला चलाकर कठोर परिश्रम के साथ भूमि को तैयार करता है। कैसा बीज हो ? बीज के लिये एक-एक दाना चुन-चुन कर तैयार करता है और उसके लिए अनुकूल ऋतु भी चाहता है। भूमि और बीज उत्तम है परन्तु ऋतु विपरीत है तो क्या बोया हुआ बीज फल दे सकेगा ? नहीं। वह अंकुरित ही नहीं होगा। बात स्पष्ट है कि भूमि और बीज को उत्तमता के साथ-साथ अनुकूल ऋतु का होना भी आवश्यक है, इसी प्रकार शुद्ध और पुष्ट रजः वीर्य, निरोगी शरीर और मन, अनुकूल आयान, ऋतु और नक्षत्र, इन सब का समन्वय होना अति आवश्यक है। आयान, ऋतु और नक्षत्रों के विषय में हमने इच्छानुसार सन्तान पुस्तक में पूर्ण प्रकाश डाला है।

यह बात बिल्कुल सत्य है कि यदि हम योजना के अनुसार सन्तान का निर्माण करें तो हम अपनी मनचाही सन्तान प्राप्त कर सकते हैं जैसे लड़का या लड़की, गोरा या श्याम, बुद्धिमान या कुबुद्धि, चरित्रवान या दुष्चरित्र, साथ में यदि हम चाहते हैं कि हमारा पुत्र डाक्टर बने, इन्जीनियर बने, प्रोफेसर बने, सर्वोच्च कमाण्डर बने, राजनेता बने, संसार का दिव्य पुरुष बने तो हम

उस प्रकार का बनाने में पूर्ण समर्थ हैं। प्रभु जी ने हमें हर प्रकार की सन्तान का निर्माण करने में पूर्ण समर्थता प्रदान की है।

परिवर्तनशील, अपक्व, अस्थिर आधुनिक विज्ञान को अपने ऊपर ओढ़े व्यक्तियों का कथन है कि यह सब कुछ गलत है और इसके पीछे कोई भी आधुनिक वैज्ञानिक आधार नहीं। वह तो केवल माता-पिता के 'जीन' को ही मान्यता देते हैं और कहते हैं कि उसी अनुसार सन्तान का जन्म होता है। यदि 'जीन' के आधार पर ही सन्तान का जन्म होता है तो एक वकील के घर में मूर्ख का जन्म क्यों होता है? वह तो 'जीन' के अनुसार वकील ही बनना चाहिये। हम देखते हैं वकील, डाक्टर, प्रोफेसर, इंजीनियरों के बच्चे महामूर्ख और अनपढ़ और मूर्ख के घर में योग्य चतुर बच्चे का जन्म क्यों होता है? आधुनिक विज्ञान के सिद्धान्त हर ५, १० वर्ष के पश्चात् बदलते रहते हैं, इसके विपरीत वेद विज्ञान के सिद्धान्त शाश्वत हैं, एक रूप हैं और उनमें आज तक कोई परिवर्तन नहीं हुआ और न भविष्य में होगा। हमारी चुनौती है कि वेद के शाश्वत सिद्धान्तों में कोई परिवर्तन हुआ हो तो वह हमें बतायें।

यदि हम विषयानन्द से दूर हटकर योजना के अनुसार सन्तान के निर्माण पर निष्ठा और लगन के साथ लग जायें तो निश्चित रूप से उत्तम से उत्तम सन्तान प्राप्त हो सकती है। इसका स्पष्ट मन्तव्य है कि प्रजनन क्रिया पर हमारा सम्पूर्ण अधिकार है और वह हर प्रकार से हमारे हाथ में है। वह किस प्रकार? इस प्रश्न का उत्तर हमने इच्छानुसार संतान और संस्कार नामक पुस्तकों में सविस्तार अंकित किया है।

स्वस्थ्य एवम् सुसंस्कृत बच्चे राष्ट्र की निधि हैं और वही

राष्ट्र के निर्माता हैं। जिनके मुखमण्डल पर आभा, शरीर में बल, मन में प्रचण्ड इच्छाशक्ति और अपार उत्साह, बुद्धि में वेद का पाण्डित्य, जीवन में स्वावलम्बन और हृदय में ऋषि गाथायें अंकित हों, जिन्हें देखकर महापुरुषों की स्मृतियाँ झंकृत हो उठें। ऐसी सन्तान पर किस माता-पिता को गर्व नहीं होगा।

उद्यान में सैकड़ों प्रकार के पुष्प लगे हैं, सबकी छटा अपने-अपने स्थान पर निराली है, परन्तु उस उद्यान में प्रवेश कर सुन्दर पुष्प वाटिका को देखने के लिये कोई प्रेरित कर पाता है? कोई प्रेरित नहीं कर पाता, वह तो झाड़ झंकारों के बीच घिरे पड़े रहते हैं। हाँ! यदि उस वाटिका में केवल एक पौधा सुगन्धित सुवासित पुष्प का लगा दिया जाये तो उसकी गन्ध पर सारा मानव समुदाय उधर को ही सहसा घूम कर वाटिका में प्रवेश कर अन्य सभी पुष्पों की छटा को निहार लेता है। निमन्त्रण देने वाला एक ही पौधा सारी वाटिका को सुगन्धित कर देता है। इसी प्रकार यदि हम आकाश में देखें तो अनगिनत तारे किसी भी अन्धेरी रात्रि में किसी पथिक को पथ दिखाने में समर्थ नहीं, हाँ! जब चन्द्रमा उदित होता है तो वह अकेला ही सारे संसार को रात्रि के घोर अन्धकार से मुक्ति दिलाकर अभय कर देता है। इसी प्रकार विषयानन्द से दूर रहकर सुसंस्कारित सन्तान के जन्म से वंश, कुल और देश आलोकित हो उठता है।

सन्तान का निर्माण चार चरणों में होता है।

१–गर्भाधान समय और इससे पूर्व की सावधानियाँ।

२–गर्भावस्था की सावधानियाँ।

३–जन्म के पश्चात् की सावधानियाँ।

४–शिक्षण काल की सावधानियाँ।

इन सावधानियों में से जिन-जिन सावधानियों को अपनाया जायेगा उन-उन सावधानियों का सन्तान पर अच्छा प्रभाव बनेगा और जिन-जिन सावधानियों को नहीं अपनाया जायेगा। उन-उन असावधानियों का सन्तान पर कुप्रभाव बनेगा। यह विचार आपके करने का है कि आप इन चारों सावधानियों में से किन-किन को अपनाते हैं किन-किन को नहीं। यह मार्ग तपस्या का मार्ग है, जिसने इस तपस्या के मार्ग का अवलम्बन कर लिया है वह धन्य हैं और यश कीर्ति के भागीदार हैं। इसमें सन्देह नहीं कि इस तपस्या के मार्ग पर यदि ५ या १० युवक परिवार आरूढ़ हो जायें और इच्छानुसार सन्तान पुस्तक में दिये गये नियमों के अनुसार कार्य करें तो वह श्री राम, श्री कृष्ण, द्रोणाचार्य और पाँचों पाण्डवों जैसे सुयोग्य बलिष्ठ सन्तानों को जन्म देकर फिर वही जगद्गुरु का पद भारत देश को दिला सकते हैं, जिसे गर्वोक्ति के साथ मनु जी महाराज ने कहा भी है–

एतद्देश प्रसूतस्य सकाशादग्र जन्मनः।
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्व मानवा ॥

भारत देश में उत्पन्न हुए विद्वानों से, पृथ्वी के समस्त मानव अपना-अपना चरित्र सीखें।

भारत देश में जन्में तपस्वी, योगी और मनीषियों ने सदैव मानव-कल्याण के हितार्थ अपने आपको आहुत किया है। वह मानव की दुर्बलता को जानते थे। वह जानते थे कि विषयासक्ति के बीच घिरा मानव कितना निरुत्साहित और निरुत्तरदायी बन जाता है। ऐसी विषम परिस्थिति में सुसंस्कृत दिव्य विभूतियों का कैसे आगमन हो। सन्तति निर्माण के इस पहलू पर भी गम्भीरतापूर्वक मन्थन कर विचार किया है। विषयानन्द के मध्य

उपस्थित सन्तान को सुसंस्कृत बनाने के भी शेष तीन चरणों की सावधानियों से लाभ उठाया जा सकता है और आशा की जा सकती है कि आप विवेकशील बच्चों के माता-पिता बनें।

दूसरा चरण—(१) गर्भावस्था में मैथुन नहीं करना चाहिए। इससे बच्चे के अंग विकृत हो जाते हैं और बच्चा बुद्धिहीन भी हो जाता है। (२) गर्भवती की दिनचर्या शुद्ध हो, भोजन सात्विक हो, भोजन में प्रोटीन, कैल्शियम, लोहा, विटामिन आदि की पर्याप्त मात्रा होनी चाहिए। जिस प्रकार की आप सन्तान चाहते हैं उस प्रकार का साहित्य पढ़ें और वैसे ही चित्रों का मनन करें। (३) गर्भावस्था में गर्भिणी को तीसरे मास से भोजन के पश्चात् नित्य दो समय सारस्वतारिष्ट समान जल मिलाकर अन्तिम समय तक देते रहें, इससे बच्चा बुद्धिमान् होगा, चतुर होगा, वाणी भी मधुर होगी। (४) कैल्शियम के रूप में प्रवाल पिष्टी आधा ग्राम से १ ग्राम तक नित्य दूध से दें, इससे बच्चे के अंग विकृत नहीं होते। (५) गर्भिणी स्त्री को प्रतिदिन पलास (ढाक) का एक पत्ता गौ दुग्ध के साथ पिलाने से उसके अति पराक्रमी पुत्र होगा और गर्भपात भी नहीं होगा। यह भी कर सकते हैं कि ढाक के हरे पत्तों को सुखाकर चूर्ण बना लें। बराबर की बूरा मिला कर नित्य एक चम्मच दूध से दें। (६) आठवें मास से रात्रि को नित्य २ माशा बादाम का शुद्ध तेल दूध में मिलाकर दें, इसे सामर्थानुसार बढ़ा सकते हैं। इसके देने से आपरेशन की आशंका नहीं रहती। प्रसव स्वयं ही सुगमता से हो जाता है। (७) परस्त्री गमन और परपुरुष गमन जैसे भयंकर और जघन्न पाप का कुप्रभाव भी सन्तान पर पड़ता है। (८) किसी भी मादक वस्तु का सेवन नहीं करना चाहिये। चाय के सेवन से भी

हानि होती है, चाय शुक्राणुओं को निर्बल बनाती है, और नष्ट तक कर देती है। पान मसाले से तो कैन्सर का आगमन सुगम हो जाता है।

तीसरा चरण—बच्चे को पहले वर्ष सर्दी, गर्मी और वर्षा तीनों ऋतुओं में विशेष सावधानी रखनी चाहिये, वस्त्र ऋतु अनुसार पहराने चाहिये, जरा-सी भी परेशानी होने पर तत्काल उत्तम चिकित्सक को दिखाना चाहिये, पोलियो की खुराक, टिटनस, काली खाँसी और बी० सी० जी० के टीके लगवाने चाहिये। माता अपना दूध जितना अधिक पिला सके पिलाना चाहिये। ६ मास के पश्चात् फल, उबली सब्जी देना चाहिए, अन्न एक वर्ष के पश्चात् दें। दाँत निकलते समय सुहागा खील शहद में मिलाकर मसूड़ों को मलें। वायोकैमिक कलकेरिया फास 6X की एक गोली दिन में केवल एक बार देने से दाँत शीघ्र निकलते हैं या वंशलोचन बारीक पीस कर २ रत्ती शहद में मिलाकर चटाना चाहिए।

बच्चे यकृत (जिगर) रोग से अधिकतर पीड़ित हो जाते हैं। यदि इसकी सावधानी पहले से ही रखी जाय तो यह रोग नहीं होता। इसके लिए बच्चों को 'कुमार्यासिव' की १० बूँद और १० बूँद जल मिलाकर दिन में दो बार हर मास में एक सप्ताह देते रहने से बच्चा इस रोग से बचा रहेगा, पाचन ठीक रहेगा।

बच्चे के हाथ-पैर मात्रा से अधिक पतले अस्थिविकार के कारण हाथ-पैरों का मुड़ जाना, खाँसी, अपचन, बार-बार पतले दस्त, उदर विकार, अफारा, सारे दिन रोते रहना आदि विकारों पर बच्चे को १० बूँद 'अरविन्दासव' १० बूँद जल मिला कर दिन में दो बार देने से बच्चा रोग मुक्त होकर स्वस्थ हो जायेगा।

चौथा चरण–बच्चे के ऊपर माता-पिता के रहन-सहन और प्रत्येक क्रिया-कलाप का प्रभाव होता है, वह उसी की नकल करता है जैसा उसके सामने होता है या वह जैसा देखता है। इसी कारण बच्चों के सामने कोई भी अव्यवहारिक कार्य नहीं करना चाहिये। बच्चों के साथ 'आप' या 'तुम' करके ही बोलें, इससे बच्चे में शिष्टता आयेगी। बच्चों के मिट्टी खाने की इच्छा होने पर उन्हें साबुत ही वंशलोचन देना चाहिये। यह खाने में मिट्टी जैसा ही लगेगा और लाभ भी देगा। बच्चे के तुतलाने पर अथवा बुद्धि निर्बल होने पर सारस्वतारिष्ट का सेवन कराना चाहिये। इसके सेवन से बच्चे में याद करने की क्षमता बढ़ जाती है।

शिक्षा एक तप है, जब यह तप के स्थान पर वैभव के प्रदर्शन का रूप ले लेती है तो इसमें भी दोष आ जाता है। जिस प्रकार एक ही युग, काल और समय की शिक्षा के दो रूप हमारे इतिहास में देखने को मिलते हैं। एक तप द्वारा शिक्षा का फल दूसरा वैभव प्रदर्शित शिक्षा का फल। दोनों में तुलना करना आपके हाथ में है,आप जिसे पसन्द करते हैं उसे ग्रहण करें। एक है तपस्या पूर्ण जीवन के साथ संदीपन गुरु के आश्रम पर पढ़ने वाले राजवंशीय श्रीकृष्ण और रंकवंशीय सुदामा, दोनों में कितना 'प्रेम' दूसरी ओर वैभव पूर्ण स्थान पर गुरु द्रोणाचार्य स्वयं शिक्षा देने आते हैं। कौरव और पांडवों को, फल निकला 'द्वेष'। जब शिक्षा तप के साथ गुरु आश्रम में जाकर पढ़ी जाती है तो उससे प्रेम, सद्भाव और सदाचार उत्पन्न होता है और जब शिक्षा बिककर घर पर गुरु आते हैं तो वह शिक्षा अहम्, प्रमाद और द्वेष देती है। इसीलिए महर्षि दयानन्द सरस्वती जी महाराज ने गुरुकुल शिक्षा को ही अधिक बल दिया। मन्तव्य स्पष्ट है कि

विद्या के साथ साथ विद्या प्राप्ति का साधन, लक्ष और प्रकार भी अपना प्रभाव रखता है। विचार पूर्वक प्राप्त की हुई विद्या से सुसंस्कृत समाज का गठन होता है।

इसी प्रकार सही और सात्विक सैद्धान्तिक ज्ञानार्जन भी गुरु गृह पर जाकर ही प्राप्त होता है, केवल पुस्तकें पढ़कर या सत्संग में भाग लेकर सुना और पढ़ा ज्ञान तो प्राप्त हो सकता है परन्तु वह क्रिया रूप व्यवहार में नहीं उतरता, हाँ ! ऐसा सस्ता ज्ञान अहम को अवश्य बढ़ा देता है क्योंकि इसमें करना-धरना तो कुछ पड़ता नहीं, केवल मुँह की बकवाद ही तो करनी होती है ? यज्ञ के पश्चात् बड़े जोर-जोर से गा-गा कर कहते हैं– 'छोड़ देवें छल कपट को' परन्तु मन मस्तिष्क में छल कपट भरा पड़ा है। अपने झूँठ को छिपाने के लिए दूसरों को झूठा सिद्ध करने में प्रवीण हो जाते हैं।

बच्चे की शिक्षा को अपनी आर्थिक विलासिता और वैभव के प्रदर्शन का माध्यम न बनायें, इससे बच्चे में बचपन से ही सम्पन्नता के अंकुर घर कर जाते हैं जो आगे चलकर बहुत ही घातक सिद्ध होते हैं। इस बात पर विचार करके अमेरिका के एक धनिक पुरुष ने अपनी एक मात्र सन्तान पुत्र को एक होस्टल में यह कहकर भर्ती कराया कि यह लड़का एक गरीब खेतीहर मजदूर का है मैं इसकी पढ़ाई में सहायता कर रहा हूं। होस्टल का वॉर्डन भी उस बच्चे को यही कहता था कि तुम एक गरीब खेतीहर मजदूर के लड़के हो और तुम्हारी पढ़ाई पर अमुक पूंजीपति सहायता देता है, तुम मेहनत से पढ़ो। लड़के ने भी कठोर तप के साथ विद्या प्राप्त की और बहुत योग्य बनकर निकला, तब उस सेठ ने कहा कि तुम मेरे ही पुत्र हो, यह सारी सम्पदा

तुम्हारी है। तुम आश्चर्य मत करो। मैंने तुम्हारे उत्थान के लिये ही ऐसा किया था। यदि तुम को यह जानकारी होती कि तुम एक अमीर पिता के पुत्र हो तो तुम इस प्रकार परिश्रम करके नहीं पढ़ते।

बच्चों को चार वर्ष तक लाड़-प्यार करे, पाँचवें वर्ष से ताड़ना में रखे। दस वर्ष पश्चात् अर्थात् १६वें वर्ष में प्रवेश करते ही सन्तान को सन्तान नहीं मित्र के रूप में व्यवहार करें। इस प्रकार के व्यवहार से बच्चे सदैव सुपथगामी और आज्ञाकारी होते हैं। बच्चों को गायत्री का जाप कराना चाहिये इससे बच्चों का चतुर्मुखी विकास होता है। इसकी सारी विधि गायत्री साधन पुस्तक में अंकित की है।

परीक्षाकाल में यदि बच्चे को पाठ याद नहीं रहता हो तो परीक्षा से एक मास पूर्व होम्योपेथिक का एनाकार्डियम ३० की शक्ति का नित्य दो वा तीन बार देने से याद बनी रहती है।

विवेकशील बच्चों के लिये 'सारस्वतारिष्ट' वरदान है पहले गर्भिणी सेवन करे पश्चात् जब बच्चा पढ़ने लगे तो उसे सेवन कराना चाहिये। इसके सेवन से निरोग्यता, मधुर कण्ठ, स्मृति परिपक्व होती है।

कल्याण अवलेह—हल्दी, बच दूधिया, कूठ मोठा, पीपल छोटी, सौंठ, काला जीरा, अजवायन, मुलैठी, सैंदा नमक, सबको समान मात्रा में लेकर बारीक कूटकर गाय का घी मिलाकर १ माशे की गोलियाँ बना लें। एक गोली नित्य दूध से दें। इसके सेवन से स्मृति बढ़ती है और कण्ठ मधुर होता है।

हृदय की निर्बलता के कारण बच्चे भयभीत रहते हैं किसी भी प्रकार का साहस नहीं कर पाते। छोटी-सी बात पर अधिक

घबरा जाते हैं, ऐसे बच्चों को दुष्ट प्रकृति के अन्य बच्चे अथवा पुरुष भयभीत करके घर से पैसा रुपया सामान आदि को मंगवा-कर हरण कर लेते हैं और बच्चा भय के कारण घर पर माता-पिता से भी कुछ नहीं कह पाता। ऐसी स्थिति में बच्चे की विशेष देखभाल करनी चाहिए और उसे नित्य प्रति दिन में दो बार अर्जुनारिष्ट की १० बूंद में १० बूंद पानी मिलाकर देना चाहिये। इसके सेवन से हृदय की निर्बलता दूर होकर बच्चे में आत्म-विश्वास उत्पन्न होने लगेगा।

कुछ प्रश्न और सुझाव

क्या आप अपने बच्चों की मनःस्थिति से परिचित हैं ? क्या आपको पता है कि आपका बच्चा नित्य यथा समय विद्यालय में पहुँचता है ? क्या आप उससे पूछते हैं कि आज क्या पढ़ा है ? क्या आप अध्यापक, प्रधानाचार्य से बच्चे के शिक्षा ज्ञान की गति प्रगति आदि को जानने हेतु विद्यालय गये हैं? आपके बच्चे के मित्र कौन और कैसे हैं, किस स्वभाव के हैं और आपके बच्चे पर क्या प्रभाव डालते हैं और उनका नैतिक स्तर क्या है ? विद्यालय जाने से पूर्व और आने के पश्चात् क्या आप बच्चे के बस्ते को देखते हैं कि उसने अपनी कोई वस्तु खोई या दूसरे की कोई वस्तु इच्छा या अनिच्छा से तो नहीं लाया है। घर से पैसे आदि तो चुराकर नहीं ले जाता ? क्या आप अपने बच्चे को भरपूर पैसे देकर विद्यालय भेजते हैं, जिससे वह अनावश्यक चीजें खरीद कर पैसे को नष्ट कर देता है, इससे साधारण बच्चों के मन में हीनता को पैदा कर उन्हें पैसों की चोरी करने पर मजबूर होने के लिये प्रोत्साहन नहीं मिलेगा ? बच्चे के शिक्षक कैसे हैं, कोई दुर्व्यसनी तो नहीं ? बच्चों के निर्माण हेतु अपने आपको सुधारना होगा।

बच्चे अति शीघ्र नकल करते हैं और आगे चलकर वही दुर्व्यसन बन जाता है। बच्चों को खिलौना न समझिये। उनके सामने अप्रसंगिक प्रलाप न करिये।

बच्चे आपके प्रेमालाप, आलिंगन, सहवास आदि के कृत्यों को न देख सकें, अन्यथा वे भी आपस में वैसा ही कृत्य करेंगे, जो आगे चलकर ब्रह्मचर्य के खण्डित होने का कारण भी बन जाते हैं। इसलिए यह कार्य बच्चे जिस कमरे में सो रहे हों उसमें न करें। आप इस भ्रम में न रहें कि बच्चे सो रहे हैं। उनकी किसी भी समय नींद उचट सकती है और वह उस अवस्था को देख सकते हैं। इसलिए यह सब कार्य अन्य एकान्त कमरे में ही हों। जहाँ इस प्रकार की सावधानी नहीं रखी जाती वहाँ पर बच्चे बड़े होकर आपस में भाई-बहिन भी वही कृत्य करने लगते हैं। इस प्रकार की अनेक बार घटनायें सामने आई हैं। मैंने स्वयं ४–५ वर्ष के बच्चों को एकान्त गली में ऐसा करते देखा है।

टी० वी० के अप्रासंगिक दृश्यों को देखने से रोकिये। इससे बच्चे के नेत्र और बुद्धि विकार युक्त होने लगेगी। बच्चों के पढ़ते समय अथवा किसी के पढ़ाते समय पर टी० वी० ट्रांजिस्टर आदि कुछ न बजायें और न किसी खाने-पीने की वस्तु के लिए कहें। बच्चों को झूठ बोलने के लिए प्रेरित न करें, आप घर में बैठे हैं, कोई मिलने के लिए आया तो बच्चे से मत कहलाइये कि घर पर नहीं हैं। बच्चों के सामने पड़ौसी, सेवक अथवा अन्य किसी परिवारजन आदि को गालियाँ न दें अन्यथा आगे चलकर बच्चे वही गालियाँ आपको भी देने लगेंगे और क्रोध में आकर अंग-भंग भी कर सकते हैं। अनुशासन सिखलाइये, शिष्टाचार बतलाइये।

तीन-चार वर्ष के बच्चे के सामने पिता बीड़ी सिगरेट पीता है और बच्चा बीड़ी-सिगरेट माचिस छीन कर तोड़के फेंक देता है तो ऐसी स्थिति में पिता क्रोधित होकर बच्चे के चपत लगा देता है। क्या, पिता का यह कृत्य उचित है ? नहीं। वास्तव में वह चपत बच्चे के नहीं वरन् पिता को अपने गाल पर लगाना चाहिये, एक अबोध बालक प्रभु प्रेरणा से तुम्हारे कुटैव को छुड़ना चाहते हैं। यदि आपने इस कुटैव को नहीं छोड़ा तो यह कुटैव बच्चे के अन्दर प्रवेश कर अपनी जड़ों को गहराई तक लेजाकर केवल बीड़ी सिगरेट तक ही सीमित नहीं रखेगा वह इससे भी आगे बढ़कर अन्य मादक द्रव्यों का भी सेवन कर सकता है। क्या आप अपने बच्चों के शत्रु हैं ? क्यों बचपन से ही मादकता की ओर धकेल रहे हैं। जरा विचार कीजिये बच्चे के शत्रु न बनकर निर्माण करने वाले पिता बनिये। समय रहते हुए विचार कर लीजिये नहीं तो पछताना पड़ेगा।

मनोविनोद में माता ने शिक्षा दी, "बेटा राम नाम जपना, पराया माल अपना।" बालक ने मनोविनोद की बात गाँठ बाँध ली और व्यावहारिक रूप में भी लाने लगे। तिगड़म से ऊपर चढ़ने लगे, मन्त्री बन गये। परन्तु मनोविनोद ने माता की शिक्षा को याद रखा, उसे भूले नहीं। शनिवार १५ जून १९९१ की प्रात: मण्डी चौक गोटा बाजार में एक ठेले पर खरबूजे बिक रहे थे। मन्त्री जी ने एक बड़ा-सा खरबूजा उठा लिया, इतने में ही एक कान्सटेबिल आया और ठेलेवाले को हाँक दिया और वह आगे बढ़ गया। इसी बीच रामकुमार जी आये, देखा और मन्त्री जी से कहा-मन्त्री जी किसे देख रहे हो ? मन्त्री जी बोले खरबूजे के ठेलेवाले को देख रहा हूं इस खरबूजे के तो मैंने पैसे दे ही दिये एक और खरबूजा लेना था। मन्त्री जी अपनी बात पूरी कर ही

पाये थे कि इतनी देर में खरबूजा बेचने वाला आया और मन्त्री जी से कहा–इसके पैसे तो दो ? मन्त्री जी ने सकपकाते हुए पैसे दिये। श्री रामकुमार के सामने ही सफेद झूँठ पकड़ा गया। मनोविनोद ने माता की दी गई शिक्षा का प्रभाव ५०-५५ वर्ष की आयु तक में नहीं भुलाया जा सका और इसी शिक्षा ने संस्था के २० हजार रुपये डकार लेने के लिए भी प्रेरित किया। मनोविनोदमें लोरियों के साथ माता की दी गई क्षिक्षा पर तो केवल अपने ज्ञान और विवेक से ही उबरा जा सकता है न कि विवेकी संस्था के मन्त्री बनने से।

माता को मनोविनोद में ऐसी शिक्षा कभी नहीं देनी चाहिए जो ढलती हुई आयु में कलंक का कारण न बन जाये।

पापार्जित धन से पोषित सन्तान माता-पिता के रक्त की प्यासी बन जाती है। यदि आप चाहते हैं कि हमारी सन्तान हम अर्थात् माता-पिता की द्वेषि न बनें, तो आपको यही उचित है कि आप अपने अथवा सन्तानादि परिवारजनों के भोजन, वस्त्र, शिक्षा आदि पर अपनी सात्विक आय के धन से ही व्यवस्था करें, इस पर किञ्चित मात्र भी पापार्जित अर्थात् किसी भी प्रकार के अनुचित एवं पुरुषार्थहीन साधनों से संचित धन का प्रयोग न करें। ऐसा करने से आपके परिवार में सात्विकता बनी रहेगी और आप बहुत-सी बुराइयों से बचे रह सकते हैं। पापार्जित धन का व्यय आप भवन बनाने पर या दूसरे दुखियों की सहायता पर या किसी अनाथ विधवा आदि की कन्या के विवाह पर व्यय करें। ध्यान रहे पापार्जित धन मन को चंचल बनाता है और पाप की ओर खींचता है, मदपान, मांस भक्षण, पर-स्त्री गमन और जुआ आदि दोषों की ओर आकर्षित करता है परन्तु

आप उधर न जायें। परन्तु बलपूर्वक मन को उधर जाने से रोकें। इसी में आपका कल्याण है।

एक युवक को डकैती और हत्या के अपराध में मृत्यु दण्ड दिया गया। अन्त समय पर उससे उसकी अन्तिम इच्छा मालूम की, तो उससे अपनी माँ से मिलने की इच्छा व्यक्त की। माँ को पास बुलाया गया, वह मृत्यु दण्ड के आसन पर खड़े अपने अपने पुत्र से मिलने आई और रोते हुए पुत्र के सर पर हाथ फेरने लगी। अपराधी ने अवसर मिलते ही मां की नाक अपने दाँतों से काट ली, वह चीख पड़ी, न्यायाधीश ने पास आकर अपराधी युवक से कहा तुमने यह क्या किया। अपराधी युवक ने हँसते-हँसते कहा—सर, आपने मुझे मेरे अपराध के कारण मृत्यु दण्ड दिया, परन्तु जिस माँ ने मुझे बचपन में ऐसे कुकृत्य करने से कभी नहीं रोका, मैं जो चुराकर लाता था वह उसे उठाकर रख लेती और कोई प्रतिकार नहीं करती थी, इसी ने तो मुझे आज इस अवस्था तक पहुंचने के लिये विवश किया और मुझे अपराध के कारण मृत्यु दण्ड मिला। मैंने मां की नाक काट कर उसे दण्डित किया है, क्योंकि इसे अपने किये का दण्ड ही नहीं मिला था। समाज में जीवित रहकर अपने बच्चे को सही शिक्षा न देने के कारण समाज के सामने आने का साहस ही न कर सके।

आप बच्चों को जैसा बनाना चाहते हैं वैसा स्वयं बनिये, बच्चे के निर्माता बनिये। इस प्रकार अपने उत्तरदायित्व को निभाने पर आप अपने बच्चे के सच्चे हितैषी, शुभ चिन्तक और रक्षक बनकर सच्चे मायनो में आप अपने बच्चे के आचार्य बन सकते हैं। तब हम भी गर्व से कह सकेंगे कि शतपथ ब्राह्मण का यह वचन सत्य सिद्ध, सार्थक और सही है।

मातृमान् पितृमानाचार्यवान् पुरुषो वेद ।

बच्चों का पहला गुरु आचार्य माता होती है। वह जन्म से चार वर्ष तक जैसे संस्कार देगी । वह अमिट बने रहते हैं। दूसरा गुरु आचार्य पिता होता है जो जीवन की शिक्षा क्रियाकलाप व्यवहार, शिष्टाचार और अनुशासन सिखलाता है। तीसरा गुरु आचार्य साक्षर ज्ञान देने वाला आचार्य गुरु होता है।

परमेश्वर ने जन्म से ही मानव को उपासना की डोर से बाँध कर रखा है, इसी कारण से मानवमात्र में उपासना वृत्ति स्वाभाविक है, नैसर्गिक है, किसी की लादी हुई नहीं अर्थात् कृत्रिम नहीं है। इसलिए बच्चों को प्रारम्भ से ही यह बताना चाहिये कि हम आर्य हैं, हमारा धर्म ग्रन्थ वेद है, हमारी उपासना योग और यज्ञ द्वारा होती है, हमारा गुरु मन्त्र गायत्री मन्त्र है। यदि आपने ऐसा न किया तो बच्चे बड़े होकर भटक जायेंगे और जो अपनी स्वाभाविक उपासना वृत्ति की कमी को पूरा करने के लिए बहकावे में आकर छली, कपटी व्यक्तियों के हाथ का खिलौना बनकर जाल में फँस कर नष्ट-भ्रष्ट होकर विधर्मी बन जायेंगे। आगे चलकर इससे देश, धर्म और संस्कृति की अपार हानि होगी।

आत्मा का भोजन आनन्द है, यदि वास्तविक आनन्द ठीक और सही प्रकार से न मिले तो मनुष्य उसे कुव्यसनों से प्राप्त कर क्षणिक आनन्द को स्वीकार कर उसी को ही सब कुछ समझ लेता है, चाहे उससे वह वर्बाद ही क्यों न हो जाये। ऐसी स्थिति आने से पूर्व ही वास्तविक उपासना की डोर वेद से जोड़ देना ही उचित होता है।

वृद्धों की समस्या और प्रश्न

सदैव यह प्रश्न सामने खड़ा रहता है कि एक माता-पिता अनेक बच्चों का पालन-पोषण, शिक्षा, विवाह और व्यवसाय आदि की व्यवस्था कर सबको सुखी देखकर अपने जीवन की यात्रा को सफल समझ कर आनन्द और सन्तोष का अनुभव करता है, परन्तु जर्जरित शरीर हो जाने पर सन्तान को वही भार लगने लगता है, अनेक योग्य और सम्पन्न पुत्रों के होते हुए भी वह भोजन वस्त्र के अभाव से ग्रसित, दुःखी होकर सोचने लगता है कि इतने बच्चों के होते हुए भी हमारी यह दुर्दशा क्यों हो रही है और इनमें से किसी को हमारी चिन्ता तक नहीं, ऐसा क्यों ? पिता के रक्त से सन्तान होती है, सन्तान के रक्त से पिता नहीं। मोह रक्त से होता है, इसलिए आप सन्तान का मोह करते हैं और सन्तान अपनी सन्तान के मोह में लिप्त रहती है।

जिस मोह और ममता के साथ मानव अपने बच्चों को पालता है उतनी ही ममता के साथ गाय भी अपने बच्चे को पालती है। परन्तु दोनों के लालन-पालन में आकाश पाताल का अन्तर है। गाय किसी लालसा से नहीं कर्त्तव्य का पालन करते हुए पालती है, वह यह नहीं सोचती कि बुढ़ापे में यह मेरी सेवा करेगा, हरी-हरी घास लाकर देगा, पानी लाकर देगा, इसके विपरीत गाय अपने अन्तिम समय तक घास और पानी की व्यवस्था स्वयं चलकर करती रहती है ऐसी अवस्था में यदि उसका बच्चा बड़ा होकर कहीं चला जाये तो उसे कोई चिन्ता नहीं, क्योंकि उसके पीछे कोई लालसा नहीं छिपी है। इसके विपरीत मानव अपने बच्चे का लालन-पालन कर्त्तव्य पालन के साथ नहीं कामना और लालसा के वश होकर ही करता है। वह चाहता है कि यह मेरे बुढ़ापे का

सहारा बनेगा। जब उसकी इस कामना को ठेस पहुंचती है और सन्तान उसकी बुढ़ापे में सेवा नहीं करती तो वह तिलमिला उठता है। कारण स्पष्ट है कि उसके लालन-पालन के पीछे कर्त्तव्य नहीं कामना छिपी होती है। यदि मानव भी कामना रहित होकर गाय के समान अपना कर्त्तव्य समझते हुए बच्चों का पालन करता है तो उसे बुढ़ापे में कोई कष्ट नहीं होगा। क्योंकि उसने अपना कर्त्तव्य निभाया है। ऐसी स्थिति में यदि बुढ़ापे में सन्तान कोई सहयोग नहीं करती है तो उसे कोई दुःख नहीं होगा और यदि कुछ करती है तो वह अपने कर्त्तव्य का पालन कर आशीर्वाद प्राप्त करती है। यह उसके सौभाग्य की बात होगी।

यहाँ पर मैं एक अनुभव की बात कह देना आवश्यक समझता हूं उस पर यदि आप ध्यान देंगे तो आपको कभी कष्ट या दुःख नहीं होगा।

बचपन के शासितपने को हम जवानी में भूल जाते हैं।
परन्तु बुढ़ापे में जवानी के शासन को याद रखते हैं।
यदि हम जवानी के शासन को भी बुढ़ापे में भुलादें
तो हमारा बुढ़ापे का जीवन सुखमय हो जायेगा।

मेरी दुकान के पास एक बिजली के सामान की दुकान हबीबुर्रहमान की है, यह दुकान मस्जिद की है, उसके प्रबन्धक एक वृद्ध मौलान खुर्शीदुलहसन किराया लेने आते थे, सर्दी का मौसम था। मैंने अपने स्वभाव के अनुसार मौलाना से धूप में बैठने को कहा–वह बैठ गये। सीधे स्वभाव के थे। उन्होंने बताया–"लाला हम तो इस बुढ़ापे में बहुत चैन से रह रहे हैं।" मैंने कहा–"इसका क्या रहस्य है?" मौलाना ने कहा–पोते-पोतियाँ कहते हैं–बाबा क्या खाओगे? तो मैं कह देता–जो तुम खिलाओगे। जो मेरे सामने आ जाता वही खा लेता हूं, मैंने सोचा यदि किसी चीज को बनाने

के लिये कहा और वह न बन पायी या उसके बनाने का सामान घर पर नहीं है। बारहाल किसी भी कारण से नहीं बनी तो मुझे दुःख होगा, इसलिये मैं कुछ कहता ही नहीं। जो मिल गया वही खा लिया और जो वस्त्र मिल गया उससे तन ढक लिया। इस सन्तोष के साथ रहता हूं, खूब आनन्द के साथ जी रहा हूँ।

यदि यह व्यवहार आपकी पसन्द हो तो उसे आप भी अपना-कर अपने बुढ़ापे के जीवन को सुख और शान्ति में बदल लीजिये।

वेदं शरणम् आगच्छामि
सत्यं शरणम् आगच्छामि
यज्ञं शरणम् आगच्छामि

वेद-दर्शन
हिन्दी टीका सहित अनुपम ग्रन्थ — मूल्य १८० /-

इच्छानुसार सन्तान
मनचाही पुत्र-पुत्री, धर्मात्मा, शासक, जितेन्द्रिय और गौर वर्ण की सन्तान प्राप्त करना। — मूल्य २५/-

पुत्र प्राप्ति का साधन
पुत्र की प्राप्ति के लिए मार्ग-दर्शन। — मूल्य ४/-

गर्भावस्था की उपासना
गर्भित बालक के संस्कार बनाना। — मूल्य /२५

दस नियम
आर्य समाज के नियमों की सरल भाषा में विस्तार से व्याख्या। — मूल्य ७/-

दैनिक पंच महायज्ञ
नित्य कर्म विधि। — मूल्य ३/-

HOW TO BEGET A SON — Price 25/-

निराकार साकार के स्वरूप का दिग्दर्शन — मूल्य २/-

मनुर्भव — मूल्य २/-

अदीनास्याम — मूल्य २/-

गायत्री साधन — मूल्य ५/-

नव-सम्वत् — मूल्य २/-

आनुषक् कहानियाँ — मूल्य १५/-

वीरेन्द्र नाथ अश्विनी कुमार
प्रकाशन मन्दिर, मण्डी चौक, मुरादाबाद

राष्ट्र उत्थान कैसे हो ?
- वीरेन्द्र गुप्तः

भेंटकर्ता

श्री राजेन्द्र प्रसाद जी

श्रीमती कान्ति देवी जी

राष्ट्र उत्थान के इच्छुक, आदर्श आर्य दम्पत्ति,
अन्तः प्रेरणा से प्रेरित होकर, स्वयम्
प्रकाशनार्थ सहयोग कर,
पुस्तक आपको 'भेंट'
कर रहे हैं।

बोध क्रम ५३ ॥ ओ३म् खं ब्रह्म ॥ प्रकाश क्रम २५

राष्ट्र उत्थान कैसे हो?

लेखक

वीरेन्द्र गुप्तः

राष्ट्रीय सम्वत् ६२

सृष्टयाब्द १,९७,३८,१३,११०

मानव सृष्टि वेद काल १,९६,०८,५३,११०

दयानन्दाब्द १८६

विक्रम सम्वत् २०६६

सन २००९ ई०

प्रकाशक :—

वेद संस्थान

मण्डी चौक, मुरादाबाद

प्राप्ति स्थान :—

वीरेन्द्र नाथ अश्विनी कुमार

प्रकाशन मन्दिर

मण्डी चौक, मुरादाबाद

चलितवार्ता ९८९७५२८९५०

आवास :—

वेद कुटि '९३'

राम बिहार कालोनी

जिला सहकारी बैंक के पीछे,

मुरादाबाद

प्रथम संस्करण

दो हजार

मूल्य :—

संस्कृति और राष्ट्र सेवा

कम्प्यूटर :— यूनिक प्रिन्टर्स, ९८९७६७६३९५

वेद संस्थान

की साहित्य सेवा

वेद संस्थान की स्थापना चैत्र शुक्ल प्रतिपदा सम्वत् २०४८ रविवार १७ मार्च १९९१ को हुई।

वेद संस्थान का लक्ष्य है—सद्साहित्य, साधन के अनुसार निःशुल्क, अल्पमूल्य अथवा लागत मूल्य पर आपके पास तक पहुँचता रहे। हमने अब तक १—विनयामृत सिन्धु, २— अभिनन्दनीय व्यक्तित्व, ३— विवेकशील बच्चे, ४— जन्म दिवस, ५— योग परिणति, ६— करवा चौथ, ७— दैनिक पंच महायज्ञ, ८— गोधन, ९— पर्वमाला, १०— दाम्पत्य दिवस, ११— छलकपट और वास्तविकता, १२— ईश महिमा, १३— मन की अपार शक्ति १४— रत्न माला १५— नयन भास्कर १६— युधिष्ठिर यक्ष गीता, १७— यज्ञों का महत्व १८— वेद उद्‌गीत, १९— दर्पण २०— राष्ट्रीय गौरव २१— संस्कार २२— वातायन २३— जीव निराकार या साकार २४— मृत्यु के पश्चात् नामक पुस्तकें प्रकाशित की है। इसी श्रृंखला में श्री **वीरेन्द्र गुप्तः** द्वारा रचित कृति २५ वीं पुस्तक **"राष्ट्र उत्थान कैसे हो?"** प्रस्तुत है। यह प्रस्तुति **वेद संस्थान** की और सहयोग दानी महानुभावों का है। इस सहयोग और उदार भाव के लिये वेद संस्थान उनका आभारी है।

हमें आशा है कि आप **वेद संस्थान** को पूर्ण सहयोग देकर नूतन साहित्य प्रकाशित करने का अवसर अवश्य प्रदान करते रहेंगे।

विजय कुमार
प्रकाशन सचिव

वेद संस्थान
मण्डी चौक, मुरादाबाद

अम्बरीष कुमार
सचिव

लेखक परिचय

नाम — **श्री वीरेन्द्र गुप्तः**
जन्म — श्रावण शुक्ल ६, संवत् १९८४,
बुद्धवार ३ अगस्त, १९२७ ई०, मुरादाबाद
गृहस्वामिनी — **श्रीमती राजेश्वरी देवी**
सम्प्रति — **व्यवसाय**

सम्मान :

१— १४ सितम्बर १९८२ राष्ट्रभाषा हिन्दी प्रसार समिति।
२— ३ अक्टूबर १९८२ आर्यसमाज मण्डी बाँस, मुरादाबाद।
३— १४ सितम्बर १९८८ श्री यशपाल सिंह स्मृति साहित्य शोधपीठ, मुरादाबाद।
४— ३० सितम्बर १९८८ अहिवरण सम्मान पुरालेखन केन्द्र, मुरादाबाद।
५— २ जनवरी १९९२ साहू शिवशक्ति शरण कोठीवाल स्मारक समिति, मुरादाबाद। द्वारा साहित्य सम्मान
६— ७ जनवरी १९९६ अभिनन्दन समिति द्वारा नागरिक अभिनन्दन एवं अभिनन्दन ग्रन्थ तथा सामूहिक अभिनन्दन पत्र।
७— ६ मार्च १९९९ अखिल भारतीय माथुर वैश्य महासभा द्वारा राष्ट्रीय अधिवेशन ग्वालियर में (साहित्य) समाज शिरोमणी सम्मान।
८— ९ मई १९९९ विराट आर्य सम्मेलन पश्चिमी उत्तर प्रदेश मेरठ (आर्य शिरोमणी) सम्मान।
९— २६ जनवरी २००० माथुर वैश्य मण्डल, मुरादाबाद द्वारा (साहित्यक शताब्दी पुरुष) सम्मान।
१०— २५ फरवरी २००० (अमृत महोत्सव) के अवसर पर संस्कार भारती, मुरादाबाद द्वारा अभिनन्दन।
११— १५ सितम्बर २००० (राष्ट्रीय हिन्दी सेवा सहस्त्राब्दी सम्मान) सहस्त्राब्दी विश्व हिन्दी सम्मेलन नई देहली के द्वारा। सँयुक्त राष्ट्र संघ (यूनैस्को) आदि से सम्बद्ध।
१२— १७ सितम्बर २००० "ज्ञान मन्दिर पुस्तकालय, रामपुर" हिन्दी दिवस पर सम्मान।
१३— १४ सितम्बर २००३ हिन्दी साहित्य सदन द्वारा 'हिन्दी साहित्य सम्मान'।
१४— २६ जनवरी २००७ माथुर वैश्य मण्डल मुरादाबाद द्वारा 'युग पुरुष' सम्मान।

उल्लेख :

१— हिन्दी साहित्य का इतिहास ले० डा० आलोक रस्तौगी एवं श्री शरण, देहली १९८८।
२— "आर्य समाज के प्रखरव्यक्तित्व" दिव्य पब्लिकेशन केसरगंज अजमेर १९८९।
३— "आर्य लेखक कोष" दयानन्द अध्ययन संस्थान जयपुर १९९१।
४— एशिया—पैसिफिक "हू इज़ हू" (खण्ड ३) देहली २०००।
५— गंगा ज्ञान सागर भाग ४ पृष्ठ २३ सन् २००२।

प्रकाशित कृतियाँ :

१— इच्छानुसार सन्तान, २— लौकिट (उपन्यास), ३— पुत्र प्राप्ति का साधन, ४— पाणिग्रहण संस्कार विधि, ५— How to be get a son,(अनुवादित) ६— सीमित परिवार, ७— बोध रात्रि, ८— धार्मिक चर्चा, ९— कर्म चर्चा, १०— सस्ती पूजा, ११— वेद में क्या है? १२— गर्भावस्था की उपासना, १३— वेद की चार शक्तियाँ, १४— कामनाओं की पूर्ति कैसे, १५— नींव के पत्थर, १६— यज्ञों का महत्व, १७— ज्ञान दीप, १८— The light of learning (अनुवादित) १९— दैनिक पंच महायज्ञ, २०— दिव्य दर्शन, २१— दस नियम, २२— पतन क्यों होता है, २३— विवेक कब जागता है, २४— ज्ञान कर्म उपासना, २५— वेद दर्शन, २६— वेदांग परिचय, २७— संस्कार, २८— निरकार साकार के स्वरूप का दिग्दर्शन, २९— मनुर्भव, ३०— अदीनास्याम, ३१— गायत्री साधन, ३२— नव सम्वत्, ३३— आनुषक (कहानियाँ), ३४— विवेकशील बच्चे, ३५— जन्म दिवस, ३६— करवा चौथ, ३७— योग परिणति, ३८— पर्वमाला, ३९— दाम्पत्यदिवस, ४०— छलकपट और वास्तविकता, ४१— श्रद्धा सुमन, ४२— माथुर वैश्यों का उद्गम, ४३— ईश महिमा, ४४— मन की अपार शक्ति, ४५— नयन भास्कर, ४६— युधिष्ठिर यक्ष गीता, ४७— वेद उद्गीत, ४८— दर्पण, ४९—राष्ट्रीय गौरव, ५०— वातायन, ५१— जीव निराकार साकार, ५२— मृत्यु के पश्चात्, ५३ राष्ट्र उत्थान कैसे हो?

सांकेतिका

उद्घोष

यह पुस्तक 'राष्ट्र उत्थान कैसे हो? अत्यन्त लघु है। विषय अत्यन्त गम्भीर है, आवश्यकता है, गिरते हुए—उजड़ते हुए देश के लिये एक महान् सम्बल, की जो इसमें इंगित है।

इस पर विचार करना आपका कार्य है। मैंने अपने अन्वेषण को सबके हाथों तक पहुँचाने का जो विचार बनाया, वह पूरा किया है। वेदाज्ञा है कि 'अपने ज्ञान को सर्वत्र और सब को ही देकर जा'। मैंने वैसा ही किया है। आप इससे कितना लाभ उठाकर राष्ट्र को गौरवान्वित करते हैं यह आपके अपने हाथ में है।

अब हम, इस ब्रह्माण्ड में क्या है इस को भी आपके अवलोकनार्थ अंकित करते हैं।

यह आकाश में दीखने वाला चन्द्रमा न केवल हमारे भूमण्डल को ही प्रकाश देता है, वरन हमारे भूमण्डल सहित २८ भूमण्डलों को प्रकाश देता है। यह एक चन्द्र परिवार है।

यह सूर्य भी सहस्त्रों चन्द्र परिवारों को प्रकाश देता है।

आकाश में आकाशगंगा को सूर्य रेखा भी कहा जाता है, इसमें करोड़ों सूर्य परिवार हैं।

वैज्ञानिकों का कहना है कि आकाश में इस प्रकार की सहस्त्रों आकाशगंगा हैं।

यह तो केवल अनुमान मात्र ही लगाया जा सकता है कि संसार में कितने भूमण्डल हो सकते हैं, कोई निश्चित बात नहीं कही जा सकती।

मेरे अपने अनुमान से कम से कम अनुमानतः ६२ नील २० खर्ब ८० अर्ब के आसपास भूमण्डल होने चाहिये।

अन्य भूमण्डलीय ग्रहों में भी मानव उपस्थित है।

परमात्मा की सृष्टि में कोई भी वस्तु अथवा सृष्टि निरर्थक नहीं है।

प्रत्येक भूमण्डल समस्त ऐश्वयों से परिपूर्ण होता हैं अर्थात् अन्न, जल, वनस्पति, फल, सब्जी, वृक्ष, लतायें, जीव–जन्तु, पशु, पक्षी, जलचर आदि और उच्चारण, भाषा, अंक, लिपि ओर वेद ज्ञान आदि सब में एक समान होता है। किसी में कुछ भी न्यूनाधिकता नहीं होती।

भूमण्डल की आयु

भूमण्डल की पूर्ण आयु ४ अर्ब ३२ करोड़ वर्ष की है। अर्थात् १ हजार चतुर्युगी की है। इसमें १४ मनवन्तर होते हैं। एक मनवन्तर ७१ चतुर्युगी का होता है अर्थात् ९९४ चतुयुगियों में मानव रहता है।। शेष ६ चतुर्युगियाँ सन्धिकाल की होती हैं। ३ पूर्व सन्धिकाल की ३ पश्चात् सन्धिकाल की है। एक चतुर्युगी में ४३ लाख २० हजार वर्ष होते हैं। सत्युग १७ लाख २८ हजार वर्ष का। त्रैता १२ लाख ९६ हजार वर्ष का। द्वापर ८ लाख ६४ हजार वर्ष का। कलियुग ४ लाख ३२ हजार वर्ष का होता है। अब तक ६ मनवन्तर व्यतीत हो चुके हैं। ७ वें मनवन्तर की २७ चतुर्युगी व्यतीत हो चुकी हैं। २८ वीं चतुर्युगी के सत्युग, त्रैता, द्वापर और कलियुग के अब तक ५१०८ वर्ष व्यतीत हो चुके हैं। भूमण्डल के परिपक्व होने में अर्थात् मानव उपयोगी समस्त पदार्थो के उत्पन्न होने के पश्चात् तीन चतुर्युगियाँ अर्थात् १ करोड़ २९ लाख ६० हजार वर्षो के पश्चात् अमैथुनी सृष्टि द्वारा मानव का अवतरण होता है।

सर्व प्रथम अग्नि, वायु आदित्य, अंगिरा इन चारों ऋषियों ने चारों वेदों का मानव को ज्ञान दिया। प्रथम मनु स्वायम्भुव मनु ने चारों वेदों को कण्ठस्थ कर ब्रह्मा की उपाधि भी प्राप्त की। आज चैत्र शुक्ल प्रतिपदा सम्वत् २०६५ रविवार तारीख ६ अप्रैल २००८ से प्रारम्भ है।

धर्म ग्रन्थ और इतिहास का अन्तर

धर्म ग्रन्थ सृष्टि के आदि में ही आता है, मध्य में आने वाले ग्रन्थ इतिहास कहे जाते हैं। धर्म ग्रन्थ परिपूर्ण होता है। उसमें न कुछ घटाने अथवा बढ़ाने की कोई आवश्यकता ही नहीं होती। इतिहास ग्रन्थ घटनाओं पर आधारित होते हैं। उसमें परिवर्तन होता ही रहता है। जो धर्म ग्रन्थ जिस भाषा की लिपि में आता है, उस लिपि के प्रथम अक्षर से ही उसका प्रारम्भ होता है। जैसे 'वेद' संस्कृत भाषा की देवनागरी लिपि में अवतरित हुआ है, सो 'वेद' का प्रारम्भ भी वर्णमाला के प्रथम अक्षर 'अ' से ही ऋग्वेद का प्रथम मन्त्र प्रारम्भ होता है, अन्य धर्म ग्रन्थों की ऐसी स्थिति नहीं है। धर्म ग्रन्थ के प्रारम्भ में कोई उपासना नहीं होती। इतिहास ग्रन्थों में पहले उपासना लिखते हैं। धर्म ग्रन्थ में उपासना, व्यवहार, खान—पान आदि की सम्पूर्ण व्यवस्थायें और निर्देश होते हैं। कहानियाँ, घटनायें, युद्धों के वर्णन इतिहास ग्रन्थ में ही होते हैं।

स्पष्ट है कि संसार में केवल वेद ही ईश्वरीय ज्ञान है। वेद सबके लिये उपकारी है, वेद सबको पढ़ना चाहिये।

परमशक्तियुक्त, परमपुरुषार्थवान, अत्यन्त बलयुक्त, समर्थवान, परमसत्ता का निज नाम, स्वाभाविक नाम, वास्तविक नाम 'प्रणव' 'ओ३म्' है, जिसे गूँगा, बहरा, अन्धा, अनाथ, अविवेकी, निरक्षर अथवा विद्याहीन, संसार के किसी भी मतमतान्तर का अनुयायी, हो चाहे संसार भर के किसी भी देश देशान्तर का निवासी हो, कोई भाषा भी न जानता हो, परन्तु भोजन करने के पश्चात् जब डकार आती है तो उन सबके मुख से 'ओ३म्' का ही उच्चारण होता है। क्योंकि वह उसका स्वाभाविक नाम है और वह स्वाभावत ही मुख से निकलता है।

यहाँ पर लिपि और भाषा के विषय में विचार करना भी आवश्यक है। यह बात स्पष्ट सिद्ध होती जा रही है कि जिस लिपि में शिक्षा प्राप्त की जाती है, उस लिपि के साहित्य से पाठक स्वमेव प्रभावित हो जाता है।

क्योंकि लिपि से अक्षर, १२ स्वर, ३६ व्यञ्जनों से भाषा बनती है, भाषा से साहित्य बनता है, साहित्य से संस्कृति का प्रभाव बनने लगता है। अंग्रेजी पढ़ने वाला बाईबिल से प्रभावित हो जाता है, उर्दू पढ़ने वाला कुरान से और संस्कृत पढ़ने वाला वेदादि शास्त्रों से प्रभावित हो जाता है।

राष्ट्र और देश की उन्नति, प्रगति, उत्थान, वैभव अथवा उज्जवल भविष्य के लिये यह आवश्यक है कि उस देश की एक लिपि, एक भाषा, एक संस्कृति, एक धर्म ग्रन्थ हो।

अनेकता में एकता कभी सफल नहीं होती।

"संस्कृतियाँ भूतकाल के आधार पर वर्तमान में भविष्य के लिये जीवित रहती हैं।" जो संस्कृति और राष्ट्र अपने अतीत पर दृष्टि डालकर अपनी भूलों को छोड़ने और अच्छाइयों को बनाये रखने का व्रत नहीं लेतीं वे संसार में उन्नति नहीं कर सकतीं। और जो भूतकाल के गौरव को बड़ी सुविधा से भुला देते हैं, मूर्खतावश भविष्य निर्माण का कोई ध्यान ही नहीं रखते और स्वार्थवश वर्तमान में स्वाभिमान रहित होकर भी शान से जी रहे हैं। क्या इस प्रकार हम अपना कुछ विकास कर सकते हैं? नहीं! न हमारा विकास हो सकता है, न उन्नति और न ही रक्षा हो सकती है। दूसरों के सहारे हम कब तक जी सकते हैं। अपने आप उठना पड़ेगा ओर उन्नति के मार्ग को अपनाना होगा।

।। ओ३म् ।।

वन्दना

इड़ा सरस्वती मही तिस्त्रो देवीर्मयोभुवः।
बर्हिः सीदन्त्वस्त्रिधः।।

ऋग्वेद १/१३/९

इड़ा, सरस्वती और मही, यह तीनों महा शक्तियाँ सुख उत्पन्न करने हारी हों। यह तीनों अक्षय, अविनाशिनी, अहिंसनीय होकर राष्ट्र में विराजें।

राष्ट्र क्या है?

जिस भू—भाग पर, एक धर्म ग्रन्थ, एक संस्कृति, एक विचारधारा के मानव जन्में हैं, वही क्षेत्र, भूमि, स्थान उनका राष्ट्र है, और वही मातृभूमि है। हमने जिस माता के गर्भ से जन्म लिया है, उसकी छाती में जो दूध है वह हमारे लिये है, उस पर किसी दूसरे का कोई अधिकार नहीं। इसी प्रकार जो हमारा राष्ट्र है, जिस भूमि के क्षितिज पर हमारी संस्कृति का दिवाकर उदित हुआ है, उस पर भी किसी दूसरे का कोई अधिकार नहीं।

माता भूमिः पुत्रो अहं पृथिव्याः।

अथर्ववेद १२/१/१२

सबको उत्पन्न करने वाली भूमि हमारी माता है, पृथिवी के समस्त मानव, हम सब उसके पुत्र हैं अर्थात् संसार के समस्त मानव आपस में हम सब भाई—भाई हैं।

आर्य ईश्वर पुत्रः।

आर्य ही ईश्वर के पुत्र हैं।

कृणवन्तो विश्वमार्यम्।

इसी कारण वेदाज्ञा के अनुसार संसार को आर्य अर्थात् श्रेष्ठ बनाने का उत्तरदायित्व आर्यों पर ही है।

इस प्रकार केवल आर्यवर्तदेश अर्थात् भारतवर्ष ही हमारा राष्ट्र हो ऐसा नहीं है, परन्तु समस्त संसार ही हमारा आर्य राष्ट्र है। जब समस्त संसार ही हमारा आर्य राष्ट्र है, तो इसके उत्थान के बारे में विचार करना, और विचार पूर्वक किया गया समाधान सबके सामने प्रस्तुत करना हमारा दायित्व बन जाता है।

समाज क्या है?

समाज एक समूह को कहते हैं। सारा संसार एक समूह है, एक समाज है, मानव समाज है। समाज में यदि मनुष्य श्रेष्ठ हैं, तो वह समाज श्रेष्ठ बन जाता है और यदि उसी समाज में निकृष्ट और स्वार्थी व्यक्तियों का प्रवेश हो जाये तो वह समाज विकृत हो जाता है। समूह व्यक्तियों के ऊपर आधारित होता है। इसका स्पष्ट प्रयोजन बना, व्यक्तियों का श्रेष्ठ होना अति आवश्यक है। इसी विचार को इंगित करके गुरुदेव महर्षि दयानन्द सरस्वती जी महाराज ने व्यक्ति के निर्माण पर अधिक बल दिया। जिस भवन की नींव सुदृढ़ होती है। वही भवन टिकाऊ होता है। इस मूल तत्व को दृष्टिगत करते हुए उस महान ऋषि ने १६ संस्कारों में सबसे पहला संस्कार गर्भाधान संस्कार रखा है। इस के परिपक्व और संस्कारित होने से उत्पन्न सन्तान संस्कारवान बनकर सबका कल्याण करे। समाज से व्यक्ति नहीं बनता, व्यक्ति से समाज बनता है और समाज से व्यक्ति परिपक्व होता है।

हमने संस्कारों पर कोई ध्यान नहीं दिया, परिणाम स्वरूप हमारे सामने संस्कार हीन संस्कृति उपस्थित है। वह 'खाओ पियो मौज उड़ाओ' के पथ पर चलकर अपना शीघ्र ही विनाश कर लेते हैं।

वर्तमान स्थिति

वर्तमान समय में संसार के सभी नर–नारी भोगवाद का शिकार बने हुए हैं। इसका एक कारण भी है, वह हर समय उत्तेजक संगीत सुनकर, उत्तेजक पोषाक को देखकर, उत्तेजक भोजन का

सेवन, मादक द्रव्यों का सेवन उत्तेजक चलचित्रों का अवलोकन आदि का अत्याधिक प्रयोग, मन को उत्तेजक बनाता चला जा रहा है। फल स्वरूप 'रति' कामना तीव्र होती जा रही है। इसके परिणामों पर किसी का ध्यान नहीं जाता। जो भविष्य में समय आने से पूर्व ही शरीर को जर्जरित कर रोगों का घर बना देती है।

मनुष्य देह को कर्म प्रधान सबने स्वीकार किया है। इसको 'चतुष्पाद' कहते हैं। चतुष्पाद का अर्थ है कि मनुष्य की दिनचर्या चार भागों में बंटी है, वे हैं 'धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष' अर्थात् 'धर्म' के साथ 'अर्थ' का संचय करना, इस संचित अर्थ का 'काम' समस्त कामनाओं की पूर्ति करना 'मोक्ष' सद्कर्म करते हुए मोक्ष की ओर पग बढ़ाना। इसी प्रकार मानव को छोड़ कर जितने भी जीव जन्तु हैं, वह सब 'द्विपाद' कहे जाते हैं अर्थात् वह 'काम' और 'अर्थ' में ही रमण करते हैं। इसलिये मनुष्य को 'कर्म' योनि ओर सबको 'भोग' योनि कहा गया है।

विचारणीय स्थिति

क्या इस प्रकार के मानवों, अथवा उनकी आने वाली सन्तति से विश्व में शान्ति, निरोगता, अभाव, अज्ञानता, कटुता अर्थात् द्वेष रहितता आदि की प्राप्ति हो सकती है? कदापि नहीं। इससे इन सभी को और प्रोत्साहन ही मिलता रहेगा। जब तक संसार में संस्कारवान मानवों की बाहुल्यता न हो।

महत्वकाँक्षा

महत्वकाँक्षा सभी में होती है। सभी चाहते हैं कि मेरी छवि (पहचान) अलग से बने। कोई विश्व सुन्दरी बनना चाहती है, कोई अपने क्षेत्रिय सुन्दरी बनना चाहती है, कोई अपने राज्य अथवा द्वीप आदि की सुन्दरी बनना चाहती है। कोई मौडलिंग के क्षेत्र में प्रवेश करके पोस्टरों, पत्रिकाओं अथवा विज्ञापनों में अपना चित्र अंकित कराना चाहती है। क्या आप जानते हैं, सुन्दरी अथवा मौडलिंग के प्रशिक्षण केन्द्र में प्रवेश करके उन बच्चियों की क्या गति होती है,

नहीं जानते। सर्वप्रथम निर्वस्त्र करके उसकी लज्जा को भंग किया जाता है अन्तिम योग्यता प्राप्त करने के लक्ष तक पहुँचते पहुँचते कितनो और किन–किन की वासनाओं को पूर्ण करना होता है। वह चपरासी, चौकीदार आदि को भी प्रसन्न करती हुई ही आगे बढ़ सकती है। एक बच्ची ने तो इनके प्रशिक्षण को तिलाँजली देते हुए कहा– 'इससे तो वेश्यालय अच्छे हैं।' आप इसी से अनुमान लगा सकते हैं। कैरियर बनाने की होड़ में बच्चियों को मत धकेलिये। मातृत्व की शिक्षा दीजिये। मातायें सभी बनती हैं, परन्तु मातृत्व किसी किसी में ही होता है। आज अपना देश मातृत्व विहीन होता जा रहा है। इसकी रक्षा कीजिये।

इस प्रकार से ख्याती, प्रशंसा, धन, यश, कीर्ति, के प्राप्त करने का क्या औचित्य है। जो केवल दो–एक वर्ष ही चल पाता है। जीवन में सब कुछ धन ही नहीं होता? धन तो आता जाता है, स्वास्थ्य भी रोग युक्त होकर और चिकित्सा द्वारा आता जाता है, परन्तु चरित्र जाने के पश्चात् फिर वापिस नहीं आता।

अंग्रेजी में कहावत है – धन गया कुछ नहीं गया, स्वास्थ्य गया कुछ गया, चरित्र गया सब कुछ गया।

वृत्तं यत्नेन संरक्षेत् वित्तमायाति याति च।
अक्षीणो वित्तता क्षीणं वृत्ततस्तु हतोहता।।

महाभारत

चरित्र को यत्न से रक्षित करना चाहिये, द्रव्य आता है और जाता है, धन से रहित व्यक्ति क्षीण नहीं होता, चरित्र हीन व्यक्ति नष्ट हो जाता है।

"धन आया कुछ नहीं आया, स्वास्थ्य आया कुछ आया,
चरित्र आया सब कुछ आया।"

विश्व सुन्दरी नहीं, विश्व माता बनो। क्षेत्रिय सुन्दरी नहीं, क्षेत्रिय माता बनो। राष्ट्र सुन्दरी (मिस इण्डिया) नहीं राष्ट्र माता बनो।

माता निर्माता भवति

माता निर्माण करने वाली होती है।

मातृमान् पितृमान् आचार्यवान् पुरुषो वद।

शतपथ ब्राह्मण

हमारा निर्माण करने वाली पहली माता है, दूसरा पिता पालन करने वाला है, तीसरा सद्ज्ञान देने वाला आचार्य होता है।

माता बनना बहुत महान है, सुन्दरी बनने से हजार नहीं लाखों गुना महान है। सुन्दरी केवल एक वर्ष तक ही ख्याति प्राप्त करती है, माता सदैव ख्यातिवान बनी रहती है।

चरित्र क्या है?

चरित्र! मानव जीवन की अत्यन्त मूल्यवान निधि है। आप सोचते हैं, चरित्र है क्या? चरित्र किसे कहते हैं, उसके क्या–क्या आचरण हैं और व्यवहार क्या है। चरित्र कहते हैं सूक्ष्म तौर पर, लंगोटे का सच्चा, हाथ का सच्चा, वाणी का सच्चा, यह तीनों चरित्र के मुख्य स्तम्भ हैं।

सप्त मर्यादाः कवयस्ततक्षुस्ता सामेकामिदभ्यं हुरोगात्।
आयोर्हस्कम्भ उपमस्य नीडे पथां विसर्गे धारूणेषु तस्थौ।।

ऋग्वेद १०/५/६

सात मर्यादायें बनायी हैं क्रान्तदर्शी शक्तियों वाले परमात्मा ने, उनमें से एक का भी (जो) उल्लंघन करता है, (वह) पापी हो जाता है। मनुष्य मात्र का वह आश्रयदाता, पास ही के घोंसले (हृदय गुफा) में निवास करता है मर्यादा–पथों के छोड़ देने पर स्व–पकड़ में रखने की शक्ति से सम्पन्न है।

सात मर्यादाओं का सम्बन्ध पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ–नेत्र, कान, नाक, त्वचा, रसना और दो कर्मोन्दियाँ वाक् और उपस्थेन्द्रिय से है, जो इनका संयत रूप से उपयोग करता है, वह पाप रहित होकर आवागमन के चक्र से बच जाता है और जो असंयत रूप से इनका दुरुपयोग करता है तो वह पापी हो जाता है और उसके ऊपर मर्यादा उल्लंघन के अनुसार दण्ड स्वमेव अपने आप ही बिना किसी पुलिस और बिना किसी न्यायालय के स्वभाविक रूप से ही लागू हो जाता है। मन्त्र में स्पष्ट है कि वह परमात्मा पास ही के घोंसले में निवास करता है अर्थात् हृदय गुफा में रहता है।

द्वा सुपर्णा सयुज सखाया समानवृक्षं परिषस्वजाते।
तयोरन्यः पिप्पलं स्वात्य स्वाद्वत्त्यनश्नन्नन्यो अभि चाकशोती।।
ऋग्वेद १/१६४/२०

स्पष्ट आता है 'वह परमात्मा प्रकृति के पदार्थों में और स्वयं जीवात्मा ने जो शरीर धारण कर रखा है, उसमें भी व्यापक होने के कारण उसके भोगने के प्रकारों को देखता है।' यही कारण है कि उसका दण्ड–विधान ज्यों का त्यों वास्तविक रूप में लागू हो जाता है। जिस प्रकार अधिक रति–प्रिये नर–नारी को उनके रति दोष से मुक्त कराने के लिये मोर–मोरनी बना देता है। मोर–मोरनी की रति कृया नहीं होती, वह तो नाचते हुए मोर की आँख के आँसू की बून्द मोरनी अपनी चोंच में लेकर गर्भ धारण कर लेती है। इसी प्रकार अन्य इन्द्रियों को दुरुपयोग का फल मिलता है। इस पाप से बचने का उपाय भी है।

परदारान्न गच्छेच्च मनसापि कथञ्चन।
किमु वाचास्थि बन्धोऽसि नास्ति तेष व्यवायिनाम्।।
विष्णु पुराण ३/१२/१२३

परस्त्री अथवा परपुरुष से तो वाणी से क्या मन से भी प्रसंग न करे क्योंकि ऐसा मैथुन करने वालों का अस्थि बन्धन भी नहीं होता अर्थात् उन्हें अस्थि शून्य कीटादि होना पड़ता है। इसमें मन, वचन, और कर्म तीनों प्रकार से परस्त्री अथवा परपुरुष गमन का निषेध है।

वही दृशमनायुष्य लोके किञ्चन विद्यते।
यादृशं पुरुषस्येह परदारोप सेवनम्।।
मनु ४/१३४

इसी प्रकार आयुक्षय करने वाला संसार में कोई कर्म नहीं है। (जैसा मनुष्य अथवा स्त्री की आयु घटाने वाला) दूसरे की स्त्री का सेवन अथवा स्त्री के लिये दूसरे पुरुष का सेवन है।

विचारों में परिवर्तन लाने का उपाय–

मातृवत्परदारांश्च परद्रव्याणि लोष्टवत्।
आत्मवत्सर्व भूतानि यः पश्यति सा पश्यति।।
चाणक्य नीति १२/१३

दूसरे की स्त्रियों को माता के समान। दूसरे पुरुषों को पिता के समान। दूसरे के धन को लोह अथवा मिट्टी के समान और अपने समान सब प्राणियों को देखता है। वही ठीक देखता है।

चरित्र का मूल्यांकन

महाराजा शान्तनु की पत्नी गंगा का नाम सत्यवती भी था। वह देवी यह जानती थी कि गर्भावस्था में मैथुन करने से बहुत भयंकर परिणाम निकलता है। महाराजा शान्तनु बहुत विषयी थे, वे गर्भावस्था में भी मैथुन कर बैठते थे, इसी कारण देवी सत्यवती हर सन्तान को जन्म लेते ही गंगा में बहा देती थी। एक दिन महाराजा ने कहा—देवी इस प्रकार वंश कैसे चलेगा? तब देवी सत्यवती ने कहा—कि आप जब वंश चलाने की बात करते हैं तो जैसा मैं कहूँगी वैसा ही आप को करना होगा। महाराज के सहमत होने के पश्चात् पुनः गर्भ स्थापित हुआ और उस अवस्था के बीच शान्तनु को विषय हेतु पास नहीं आने दिया। इस प्रकार दोनों में अशान्ति बढ़ने लगी और बच्चे को जन्म देकर स्वयं गंगा—गंगा में समा गई। इस प्रकार गर्भावस्था में संयत व्यवहार से उत्पन्न बालक भीष्म, दृढ़ प्रतिज्ञ भीष्म पितामह बने। सत्यवती गंगा के जाने के पश्चात् राजा शान्तनु ने मल्लाह की कन्या से विवाह किया। उससे दो पुत्रों का जन्म हुआ। गर्भावस्था में भी समागम होने के कारण दोनों सन्तानें अल्पआयु में ही सिधार गई।

देवी रुक्मणी परम पूज्य हैं, जिन्होंने श्री कृष्ण जी से अपने प्रेम वश अपहरित होकर विवाह किया और प्रथम सौभाग्य रात्रि (सुहागरात) के समय बिना आलिंगन किये ही १२ वर्ष का अखण्ड ब्रह्मचर्य का व्रत लेकर अंगिरस घोर के बद्रिकाश्रम में रहकर तपस्या पूर्ण जीवन व्यतीत करने के पश्चात् एक मात्र पुत्र प्रद्युम्न को जन्म दिया। घटना क्रम से ऐसा लगता है कि दुबारा श्रीकृष्ण और रुक्मणी का आलिंगन न हुआ हो।

भीष्म पितामह! कहते हैं—अखण्ड ब्रह्मचारी होते हुए भी दृढ़ता से मैं अपने आपको आठों प्रकार के मैथुनों से वन्चित रहते हुए भी अखण्ड ब्रह्मचारी नहीं कह सकता। परन्तु श्री कृष्ण गृहस्थ होते हुए भी पूर्ण ब्रह्मचारी हैं, वह पाप और दोषों से रहित हैं।

यूनान के बादशाह अफलातून ने भारतीय दर्शन का अवलोकन कर ब्रह्मचर्य के महत्व को समझा। उनके एक ही पुत्र था, छोटा था। तब से उन्होंने ब्रह्मचर्य का पालन करना स्वीकार कर उस पर आचरण भी करने लगे थे। इस व्यवहार से उनकी पत्नी धर्म संकट में पड़ी थी, कि वे अब मेरे पास तक क्यों नहीं आते।

एक दिन बेगम ने बच्चे को समझाकर भेजा कि तुम आज अपने पिता से कहना कि यदि हमारे एक छोटा भाई या बहिन होती तो हम दोनों एक साथ खेलते। बच्चे ने पिता के पास जाकर वैसा ही कह दिया। बादशाह अफलातून समझ गये कि उनकी बेगम को एक और सन्तान चाहिये। उन्होंने घर जाकर भोजन किया और बेगम से कहा कि आज हमारे सिरहाने कफन (कुवसन) अथवा प्रेत वस्त्र रख देना। बेगम घबरा उठी, उसने कहा—आपको क्या हो गया है, जो ऐसी बातें कर रहे हो। बादशाह ने कहा—तुम को एक बच्चा और चाहिए है, मैं जानता हूँ कि मैंने एक बच्चे को जन्म देकर अपनी शरीरिक शक्ति का कितना क्षय किया है, इसे मैं ही जानता हूँ, अब आपको दूसरी सन्तान चाहिये, इसे जन्म देने पर मेरी मृत्यु ही हो जायगी। यह सुनकर बेगम रोने लगी और कहा—नहीं, मुझे और बच्चा नहीं चाहिये मैं आपके जीवन से खिलवाड़ नहीं कर सकती, इस प्रकार दोनों ने शेष जीवन ऐसे ही व्यतीत कर दिया।

औरंगजेब के दरबारी वीर राजपूत यशवन्त सिंह के पुत्र पृथ्वी सिंह ने खाली हाथ, हिंसक सिंह से भिड़ कर तत्काल जबड़े को पकड़ कर सिंह को चीर दिया।

आचार्य कय्यट का सम्पूर्ण विवाहिक जीवन पूर्ण ब्रह्मचर्य के साथ अर्थात् अक्षत वीर्य और अक्षत योनि का ही व्यतीत हुआ, उन्होंने पाणिनी ऋषि की अष्टाध्यायी पद उनके शिष्य पातनंजली

ऋषि ने महाभाष्य लिखा था, उस महाभाष्य पर वृहद भाष्य आचार्य कय्यट ने लिखा जो आज कल व्याकरण में पढ़ाया जाता है।

अमरीका के कैनैडी राष्ट्रपति पद के लिये निर्वाचन लड़ रहे थे, इनके प्रतिद्वन्दी अधिक सशक्त थे। परन्तु अमरीका की संस्कृति के विपरीत कैनैडी का पारिवारिक गृहस्थ जीवन एक पत्नी व्रती था। उनके इस पवित्र गृहस्थ जीवन की विशेषता के कारण ही वहाँ की महिलाओं और नागरिकों ने अधिक से अधिक मत देकर उनको पूर्ण विजयी बनाया।

इन घटनाओं से सिद्ध होता है कि जीवन में चरित्र का मूल्य बहुत अधिक होता है।

सन्तति निर्माण

पूर्वोक्त सभी सन्दर्भो से स्पष्ट है कि संस्कारित सन्तान के निर्माण पर अवश्य ही ध्यान देना चाहिये।

''स्वास्थ्य एवं सुसंस्कृत बच्चे राष्ट्र की निधि हैं, और वही राष्ट्र के निर्माता हैं। जिनके मुख मण्डल पर आभा शरीर में बल, मन में प्रचण्ड इच्छाशक्ति और अपार उत्साह, बुद्धि में वेद का पाण्डित्य, जीवन में स्वावलम्बन और हृदय में ऋषि गाथायें अंकित हो। जिन्हें देखकर महापुरुषों की स्मृतियाँ झंकृत हो उठें।''

वेद प्रणीत आयुर्वेद का नियम है। १० मास गर्भावस्था के, १० मास बच्चे के दूध पीने के, १० मास स्त्री के स्वस्थ्य होने के लिये होते हैं, अर्थात् ढ़ाई वर्ष के पश्चात् दूसरा गर्भ स्थापित होना चाहिये। इसका स्पष्ट निर्देश और प्रयोजन है कि हम ढ़ाई वर्ष में केवल एक बार ही स्त्री का सेवन करें। अर्थात् ढ़ाई वर्ष तक स्त्री पुरुष दोनों पूर्ण ब्रह्मचर्य का पालन कर अपने अपने रजः वीर्य को शुद्ध पवित्र और पुष्ट बनाकर अगली सन्तान को जन्म दें।

जब इस प्रकार सन्तति का निर्माण होता है तो वह अत्यन्त विवेकी, योग्य, विद्वान् और शूरवीर होती है। हम महाभारत को देखें

कि एक—एक महारथी एक सहस्त्र योधाओं से लड़ने वाला होता है, ऐसे—ऐसे सात महारथियों ने मिलकर भी वीर अभिमन्यु को परास्त नहीं कर पाये। राणा सांगा, महाराणा प्रताप छत्रसाल, शिवाजी जैसे योधाओं का इसी प्रकार निर्माण हुआ था।

वर्तमान समय में यह बातें स्वप्नवत बन गई हैं। परन्तु हम यदि चाहें तो ढ़ाई वर्ष नहीं तो एक वर्ष का ब्रह्मचर्य अवश्य धारण करें। ऐसा भी न कर सकें तो कम से कम गर्भावस्था में तो मैथुन न करें। इससे भी बहुत कुछ परिवर्तन आ सकता है। 'शतपथ ब्राह्मण' ग्रन्थ की प्रथम कण्डिका सन्तति निर्माण पर ही प्रकाश डालती है।

नारी

नारी भोग्या नहीं, 'नर' की खान है। इसी नारी ने श्री रामजी श्री कृष्ण जी जैसे बलिष्ठ पुरुषों को जन्म दिया। जिन्होंने उस युग के समाज की दिशा को बदला था। समय—समय पर अनेकानेक महापुरुषों को इसी नारी ने जन्म दिया है। इसीलिये नारी को "माता निर्माता भवति" कहा जाता है। नारी केवल इन्द्रिय सुख अथवा वासना पूर्ति का हेतु नहीं है, वास्तव में वह महापुरुषों और बलिष्ठ आत्माओं को जन्म देने वाली एक समर्थवान महाशक्ति रूप है। परन्तु इस से पूर्व नारी को प्रजनन विज्ञान से पूर्ण परिचित होना नितान्त आवश्यक है। इसी विज्ञान के द्वारा पूर्व के मनीषियों ने इस देश की भूमि पर जन्मे वेदज्ञ विद्वान् से अपना—अपना चरित्र सीखने के लिये आवाहन किया।

एतद्देश प्रसूतस्य सकाशादग्रह जन्मनः।
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्व मानवा।। (मनु)

प्रजनन विज्ञान से योन शिक्षा का कोई सम्बन्ध नहीं। प्रजनन विज्ञान दम्पत्ति तक ही सीमित रहता है और योन शिक्षा से व्यभिचार बढ़ता है। बच्चे और बच्चियों को बाल्यकाल से ही व्यभिचार की

ओर धकेल देना है। जिसका परिणाम होता है, विवाह तक पहुँचते—पहुँचते उन युवकों का स्त्री के अयोग्य हो जाना। मेरे पास अनेकानेक ऐसे बच्चे आये हैं और आते रहते हैं। ऐसी अवस्था में कैसे संस्कृति सुधर सकती है।

वर्तमान समय में गृहस्थों ने भारतीय प्रजनन विज्ञान के अभाव में भी अनेकों दिव्य विभूतियों को प्रदान किया है, जैसे गुरुदेव दिव्य दयानन्द सरस्वती जी महाराज, स्वामी श्रद्धानन्द, महात्मागाँधी, सरदार पटेल, लाला लाजपत राय, चन्द्रशेखर आजाद, श्रीमती इंदिरा गांधी, वैज्ञानिक भावा ऐटौमिक अस्त्रों के निर्माता आदि को बिना प्रजनन विज्ञान की शिक्षा के दिया है।

विचार कीजिये, यदि यह सब पूर्ण प्रजनन विज्ञान के सहित गृहस्थ दम्पत्ति के बीच जन्म लेते तो इनकी सामर्थ्य कुछ और ही होती।

परन्तु खेद इस बात का है कि आज की नारी ने संसार की चकाचौंध में फँस कर अपने अस्तित्व को भुला दिया, वह भी 'खाओ पियो, मौज उड़ाओ' की संस्कृति का शिकार बन गई।

रात्रियों की व्यवस्था

ईश्वरीय व्यवस्था के अनुसार 'सम' रात्रियों में स्त्री का 'रजः' न्यून हो जाता है और 'विशम' रात्रियों में अधिक होता है। 'सम' रात्रियाँ २,४,६,८,१०,१२,१४,१६ 'विशम' रात्रियाँ ३,५,७,९,११,१३,१५ होती हैं। इन रात्रियों की गणना जिस दिन और जिस समय मासिक धर्म शुरु होता है वह प्रथम दिन और वही प्रथम रात्रि होती है, ठीक २४ घन्टे पश्चात् दूसरा दिन प्रारम्भ हो जाता है और दूसरी रात्रि भी। इसी प्रकार रात्रियों की गणना होती है। 'सम' रात्रियों में गर्भ स्थित होने पर पुत्र और 'विशम' रात्रियों में गर्भस्थित होने पर कन्या का जन्म होता है।

रात्रियों के गुण–दोष

१– ४,७,११,१३ रात्रियाँ दोष युक्त कलंक को प्रदान करने वाली सन्तान को जन्म देती हैं। इन रात्रियों में कभी भूल कर भी गर्भ स्थापित न करें।

२– परदेश में अथवा दूसरे के गृह पर कभी भी गर्भाधान न करें।

३– ५,६,८,९,१०,१२,१४ रात्रियाँ दोष रहित हैं, इनमें गर्भ स्थापित करना चाहिये।

४– यह सब भिन्नता स्त्री के आर्तव अर्थात् स्त्री के मासिक धर्म का 'रज:' के कारण ही होती है। स्त्री के आर्तव की भूमिका सर्वोपरि है।

आपके सामने प्रत्येक दिन की रात्रि के स्त्री आर्तव की स्थिति को रखते हैं।

प्रथम के तीन दिन पूर्वमास का संचित आर्तव प्रवाहित होने लगता है।

चौथे दिन से नया आर्तव बनने लगता है। आर्तव की अति न्यूनता होने के कारण, इस दिन रात्रि में गर्भ स्थित होने पर उससे पुत्र का तो जन्म होगा। परन्तु वह आर्तव न्यून होने के कारण अल्पायु हो सकता है।

पाँचवें दिन की रात्रि में कन्या, छठे दिन की रात्रि में मध्यम आयु का पुत्र जन्म लेता है।

सातवें दिन की रात्रि में स्त्री के आर्तव में प्रजनन क्षमता के तत्व कम होते हैं। इस प्रकार के आर्तव से उत्पन्न कन्या में बन्ध्या दोष बन जाता है।

आठवें दिन की रात्रि में पुत्र, नवें दिन की रात्रि में कन्या, दसवें दिन की रात्रि में चतुर पुत्र उत्पन्न होता है।

११वें १३ वें दिन की रात्रियों में स्त्री का आर्तव अत्यन्त उत्तेजक होता है। इन रात्रियों में स्थापित गर्भ से उत्पन्न कन्या का शरीर अत्यन्त उत्तेजक आर्तव से निर्मित होता है। इसी कारण वह उत्पन्न कन्या अत्यन्त कामुक और विषयी हो जाती है। उसे इस प्रकार के पाप कर्म करने से कोई रोक नहीं सकता। हाँ यदि वह कन्या अच्छे सत्संगों में पड़कर और सात्विक भोजन अपना कर बहुत कुछ इस पाप से बच सकती है। ११वीं और १३वीं रात्रि में अधिक उत्तेजक आर्तव के कारण स्त्रियाँ इन दोनों दिनों में विषय वासना की अधिक इच्छुक होती हैं। इस भयंकर होने वाली हानि को ध्यान में रखकर उन दिनों में सहवास नहीं करना चाहिये।

बाहरवीं और चौदहवीं रात्रि में स्त्री का उत्तेजक और उग्र आर्तव बिलकुल शान्त हो जाता है। यह एक प्राकृतिक प्रक्रिया है। बरहवें और चौदहवें दिन की रात्रियों से उत्तम पुत्र उत्पन्न होता है।

१५–१६ वें दिन की रात्रियों में स्थापित गर्भ से संसार को चकित करने वाली दिव्य विभूतियाँ जन्म लेती हैं। १५ वीं रात्रि की कन्या और १६ वीं रात्रि का पुत्र होता है। इन दोनों दिनों में स्त्री का आर्तव परिपूर्ण, शुद्ध, पवित्र और दोष रहित होता है, इसी कारण सन्तान में दिव्यता प्रवेश करती है।

पुत्र की तिथियों में कोई विकार युक्त तिथि नहीं है। वह युवा होकर तामस पूर्ण, अण्डा, मांस, लहसुन, प्याज, तेज मिर्च मसालें आदि उत्तेजक भोजन, साहित्य, संगत आदि के अधिक सेवन से ही अधिक विषयी बन जाता है। उसे केवल भोजन, साहित्य, और संगत के त्याग से ही नियन्त्रित किया जाता है।

५— अधिक विषयी होने अच्छा नहीं, गर्भावस्था में भी विषयी नहीं होना चाहिये। इसका दुष्परिणाम सन्तान पर अवश्य पड़ता है।

६— किसी भी प्रकार के नशे की अवस्था में गर्भ स्थित हो जाने पर उससे उत्पन्न सन्तान, किसी भी प्रकार की मानसिक विकृति का किसी भी अवस्था अथवा आयु में शिकार बन सकती है, इसे कोई रोक नहीं सकता। क्षणिक पौरुष शक्ति वर्धक औषधियों में नशा

ही प्रधान होता है। इस कारण इनका सेवन करके गर्भ स्थापित नहीं करना चाहिये।

७— गर्भावस्था में मैथुन और कामुक अथवा उत्तेजक साहित्य का अवलोकन करने से गर्भित सन्तान अधिक कामुक और विषयी बन जाती है। ८०—९० प्रतिशत रोगादि दोष जन्म से ही बच्चे में लग जाते हैं। अथवा अच्छा साहित्य पढ़ने से और वासना से दूर रहने पर अच्छी सन्तान होती है।

विनम्र निवेदन

देश, जाति, धर्म, संस्कृति और वंश के, किञ्चित मात्र भी उत्थान की इच्छा हो तो वह दम्पति मादक द्रव्य के सेवन से रहित होकर ९वीं अथवा १५वीं रात्रि में कन्या के लिये और १२—१४ वीं अथवा १६वीं रात्रि में पुत्र के लिये गर्भ स्थापित करें। साथ में गर्भ स्थापित हो जाने के पश्चात् जब तक बच्चे का जन्म न हो जाय तब तक गर्भणी स्त्री से प्रसंग कदापि न करें। आपने देखा होगा गाय, भैंस, कुत्ता, बकरी आदि सभी जीव जन्तु गर्भित हो जाने के पश्चात् समागम नहीं करते। पुत्र और कन्या दोनों को ही जन्म देना है, केवल पुत्रों को ही नहीं? सुयोग्य पुत्र को सुयोग्य पत्नी और सुयोग्य कन्या को सुयोग्य पति चाहिये।

यदि इस प्रकार के आचरण से समूचे देश से न्यूनतम सौ पचास परिवार प्रतिवर्ष देश के लिये सन्तानों को प्रदान करते रहें, तो हमारी संस्कृति संसार में उच्चासन को प्राप्त कर विश्व शान्ति का वेद संदेश देकर सब को, आचार वान दिशा में चलने का मार्ग मिल सकता है। संसार में आर्यों का अर्थात् श्रेष्ठ पुरुषों की आचार संहिता और शासन व्यवस्था स्थापित हो सकती है। वही राज्य वेद का आश्रय दाता भी बन सकता है। यह अत्यन्त कठोर तप है, परन्तु राष्ट्र के लिये अमृत बूंटी है। इन सब सावधानियों और साधनों से आगामी सन्तानों को भी अवगत कराना चाहिये। जिससे सन्तति उत्तरोत्तर संस्कारित बनती रहे।

अपेक्षा

जो भाग्य शाली परिवारों के दम्पति मेरी प्रार्थना, भावना और कामना के अन्दर छिपी हुई वेदना का मूल्याँकन कर उपरोक्त विनम्र निवेदन को स्वीकार करके अपने इन्द्रिय सुख पर अंकुश लगाकर राष्ट्र को संस्कारित बच्चे देने की इच्छा रखते हो, वह इच्छानुसार सन्तान पुस्तक में अंकित उन सभी सावधानियों को अपनाये। आप देश के अथवा विश्व के किसी भी भाग के निवासी ही क्यों न हों। हम सबका स्वागत करते हैं। वेद कुटि १३, राम विहार कालोनी, जिला सहकारी बैंक के पीछे मुरादाबाद २४४००१ से और निर्देशों को प्राप्त कर अवलम्बन करें। निश्चित रूप से इच्छित सफलता प्राप्त होगी।

व्यभिचार अर्थात् पर स्त्री गमन को आत्म हनन कहना चाहिये। पाप, आत्मा को मलीन करता है, व्यभिचार सबसे बड़ा पाप है। भय, चिन्ता, क्रोध, मोह और नीच विचार व्यभिचार के साथ आते हैं। मस्तिष्क में पृथक–पृथक स्थान हैं, जहाँ भिन्न–भिन्न प्रकार के आनन्द ग्रहण किये जाते हैं। विषयानन्द जहाँ ग्रहण होता है, वह स्थान सबसे पीछे और सबसे निकृष्ट स्थान है।

जिन्होंने १५ वें लूई के समय का, फ्राँस का कुत्सित इतिहास पढ़ा है, और जो उस भीषण लाल क्रान्ति के विषय में जानते हैं, जो निरन्तर ५० वर्षों तक फ्राँस में ऐसे थर्रा देने वाले रूप में हुई थी। इतिहास कार लिखता है–

उस समय घूस और व्यभिचार की पराकाष्टा हो गई थी। फ्राँस देश से पतिव्रत धर्म का देशनिकाला हो गया था। १५ लूई अत्यन्त स्त्री लपट राजा था। बुढ़ापे में तो वह अपनी वेश्या के इतना वशीभूत हो गया था कि उसी के इशारे पर राज्य होता था।

स्पार्टा का प्रसिद्ध ऋषि लाइकरगस! इस व्यभिचार के भयंकर प्रभाव को अच्छी प्रकार समझ गया था। यह वह समय था, जब सारा स्पार्टा और यूनान ऐयाशी में सराबोर था। इस ऋषि ने सन्तती निर्माण के विज्ञान का सही मूल्यांकन कर सामाजिक जीवन

को उलटने के लिये सबसे अधिक जोर व्यभिचार की प्रवृत्ति रोकने में किया। उसने नियम बनाया कि विवाह कोई युवक युवती स्वतंत्रता पूर्वक न करने पायेगा। बल्कि गवर्नमैन्ट इस बात का निर्णय करेगी और रूप, स्वास्थ्य और बल में जो स्त्री पुरुष समान होंगे, उन्हें ही परस्पर विवाह करने की आज्ञा दी जायगी। उसका मत था कि विवाह करना व्यक्तिगत सम्बन्ध नहीं है, सामाजिक सम्बन्ध है और सन्तान माता पिता की सम्पत्ति नहीं है, गवर्नमैन्ट की सम्पत्ति है। उसने यह भी नियम बनाया था कि कोई विवाहित स्त्री पुरुष स्वच्छन्दता पूर्वक एकत्र नहीं सो सकते थे। उसने ऐसा प्रबन्ध किया था कि सब पुरुष एकत्र होकर बाहरी स्थान में सोवें। और स्त्रियाँ भीतरी स्थान में, केवल ऋतु—काल के पश्चात् एकत्र हों, उसके पश्चात् पुनः अलग—अलग ही शयन करेंगे। वह जानता था कि गर्भावस्था में मैथुन होने से कितनी भयंकर हानि होती है। इन सबका यह प्रभाव हुआ है कि स्पार्टा में बड़े—बड़े कद्दावर मनुष्य पैदा हुए। स्पार्टा के योद्धाओं ने तीन—तीन सौ सिपाईयों के द्वारा दस—दस हजार शत्रुओं को विजय किया।

एक स्पार्टा के सिपाही से एक परदेसी ने पूछा "तुम्हारे स्पार्टा में व्यभिचार की क्या सजा दी जाती है? उसने उत्तर दिया—मित्र! हमारे देश में व्यभिचार होते ही नहीं। अजनबी फिर भी यदि कोई व्यभिचार कर बैठे? सिपाही—तब उसका वह बैल छीन लिया जाता है, जिसका सिर इस पहाड़ी पर और पूँछ उस पहाड़ी पर हो। आगन्तुक—भला यह कैसे सम्भव हो सकता है? इतना बड़ा बैल तो हो ही नहीं सकता। सिपाही—तब स्पार्टा में भी व्यभिचार नहीं हो सकता।" कितना आत्म बल बढ़ा है वहाँ से सैनिकों में।

गर्भावस्था की अवस्था में मैथुन रहित होने के कारण भीम का पुत्र घटोर्कच्छ और अर्जुन का पुत्र ब्रुवाहन 'अत्यन्त बलवान रहे थे। इनकी वीरता का गुणगान महाभारत में मिलता है।

श्री कृष्ण जी अत्यन्त बलवान थे, आप्त पुरुष थे, वेदज्ञ थे, घनान्त वेदपाठी थे, सामवेद का मुरली पर गायन करते थे, वह एक पत्नी व्रति थे, रुकमणि उनकी पत्नी का नाम था, वह गृहस्थ में रहते

हुए भी ब्रह्मचर्य का पालन करते थे, उन्होंने जीवन भर परस्त्री का स्पर्श तक नहीं किया, केवल एक पुत्र को ही जन्म दिया, शेष जीवन ब्रह्मचर्य के साथ व्यतीत किया। वह समस्त यदुवंशियों में व्याप्त दुराचार और कथनी और करनी के अन्तर को समूल नष्ट करना चाहते थे। इन्हीं गुणों के कारण वह संसार प्रसिद्ध रहे।

जिस प्रकार एक व्यक्ति द्वै लैंगिक नहीं हो सकता, उसी प्रकार योगी और भोगी एक नहीं हो सकता।

चीन के माओत्सेतुंग युवाकाल से ही राष्ट्रीय धारा से जुड़े। उन्होंने देखा, हमारे ऊपर अंग्रेज और जापानी किस प्रकार अत्याचार करते हुए शासन कर रहे हैं। माओत्सेतुंग ने ब्रह्मचर्य के बल को समझा, अपने आपको सशक्त बनाया। कोरिया में जाकर जूडो कराटे, और मल युद्ध का पूरा प्रशिक्षण प्राप्त कर, चीन लौटे। युवकों को एकत्र किया, सबको सिखाया।

जो हमारे साधना में रत लामाओं को ध्यान अवस्था में ही बैठे–बैठों को समाप्त कर दिया जाता था। जब माओत्सेंतुग के युवा तैयार हो गये तो उसने अपना जौहर दिखाना आरम्भ कर दिया। एक–एक चीनी युवक ने चार–चार पाँच–पाँच विदेशियों को मार मार कर भगाना आरम्भ कर दिया। इस प्रकार ब्रह्मचर्य के बल को संचित कर माओत्सेतुंग ने चीन को स्वाधीन कराया।

शतपथ ब्राह्मण ग्रन्थ की प्रथम कण्डिका में यज्ञ द्वारा संस्कारित सन्तान को ही जन्म देने का विधान किया है।

दिनचर्या

जिन दम्पतियों ने इन्द्रिय सुखों पर अंकुश लगा कर, इस कठोर तप में पग बढ़ाया है वे धन्य हैं। उनकी गर्भणी स्त्री की दिनचर्या इस प्रकार की बनानी चाहिये।

प्रात:काल बड़े दिनों में ५ बजे और छोटे दिनों में ६ बजे उठकर शौचादि और गृह कार्यों के पश्चात् स्नान करके एक चित्त होकर बैठ कर प्रथम सन्ध्या, यज्ञ करके गर्भावस्था की उपासना का पाठ करें, आर्य्याभिविनय का पाठ करें। दिन में समय अनुसार संस्कृत शिक्षा, अष्टाध्यायी, वेदाँग प्रकाश, महर्षि दयानन्द जी का जीवन चरित्र, पञ्चतन्त्र, चाणक्य नीति, विदुर नीति, कौटिल्य अर्थशास्त्र, ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका सत्यार्थ प्रकाश आदि ग्रन्थों का नित्य थोड़ा–थोड़ा अध्यन करती रहें, अतिरिक्त समय में गायत्री मन्त्र का मानसिक जाप करती रहें।

हल्का, सुपाच्य, मधुर भोजन करें। चौथे मास से सार स्वतारिष्ट और ब्राह्मीवटी का प्रयोग अन्त तक करना चाहिये। सातवें मास से रात्रि को अन्त तक दूध में बादाम का तेल २ ग्राम लेते रहना चाहिये। रात्रि को अधिक देर तक न जागें। नींद न आने पर उपरोक्त ग्रन्थों का मनन करें।

जीवात्मा का शुद्ध चेतन स्वरूप

मनुष्य देह कर्म प्रधान योनि है। इसी के द्वारा जीवात्म मोक्ष के साधन को अपना कर मोक्ष की प्राप्ति कर सकता है। पूर्व मनुष्य देह में किये गये समस्त कर्मों का दण्ड रूप फल भोग कर जीवात्मा जब पुन: मनुष्य देह में आता है तो वह पूर्ण शुद्ध चेतन रूप में ही अवतरित होता है। जीवात्मा मानव केश की नोक के साठ लाख में भाग से भी छोटा होता है। जीवात्मा से भी लघु 'चित्त' नाम का यन्त्र उसके पास होता है। जिसमें समस्त योनियों में भ्रमण करते हुए जो–जो कर्म किये थे वह सब संस्कार रूप में 'चित्त' नामक यन्त्र में समाहित हो जाते हैं। वह कभी समाप्त नहीं होते। इसी कारण योग दर्शन में सदैव चित्त की वृत्तियों का निरोध करते रहने की आज्ञा की है।

जब जीवात्मा मनुष्य देह में शुद्ध रूप में अवस्थित होता है तो वह जन्मते ही क्यों कर कष्टों में पड़ जाता है? यह एक प्रश्न उठता

है। इसमें कुछ का कथन है कि वह पूर्व जन्मों के कुछ शेष भोगों के कारण ही होता होगा? मेरे विचार से यह बिल्कुल असत्य लगता है।

वास्तव में जब माता–पिता गर्भाधान के इच्छुक होते हैं, तभी से पुरुष शरीर में स्थित जीवात्मा पर उनके वातावरण और कृत्यों के रूप में शरीरस्थ जीवात्मा पर संस्कार रूप में आच्छादित होने लगते हैं। उसके पश्चात् गर्भाधान कृत्य, कमरे की साज–सज्जा, दोनों के मानसिक विचार, रति समय पर किसी भी प्रकार की किसी घटना की स्मृति, किसी घटना की चर्चा, उस समय के पास पड़ोस के वातावरण और वीर्य सेचन समय दोनों के शरीरों का संय्यत होना अर्थात् नेत्रों के सामने नेत्र, नाक के सामने नाक, मुख के सामने मुख, नाभि के सामने नाभि का होना अर्थात् बिल्कुल सीधे ही वीर्य सेचन का होना, कुछ भी टेढ़ा मेढ़ा होने पर बच्चे के उसी कोण का अंग विकृत हो जाना आदि सभी का संस्कार रूप में आच्छादन होता रहता है।

ऋतुमति अर्थात् रजस्वला स्त्री को निरन्तर तीन दिन तक बड़ी सावधानी से बिताने चाहिये। जैसे मासिक धर्म अवस्था में दिन में सोने से सन्तान अधिक सोने वाली। नेत्रों में अन्जन, काजल अथवा कोई औषधि डालने से सन्तान अन्धी होगी। रोने से विकृत नेत्र तथा विकार युक्त। अनुलेपन उबटन करने से निर्बल दुबली सन्तान। तेल मर्दन से कुष्ठी, कुष्ट रोग वाली। नाखून काटने से–नाखून रहित। दौड़ने से चन्चल। हँसने से–काले दाँत अथवा काले ओष्ठ वाली। अति भाषण से–बकवादी। वेग की ध्वनि सुनने तथा बेग से बोलने से–बहरी। लिखने से–मूर्ख। अति वायु सेवन से–उन्मत सन्तान होती है। ऋतुमति स्त्री उपरोक्त कार्य जिस ऋतु काल में करेगी उस मास में गर्भ स्थित होने पर वह दोष उस सन्तान में प्रवेश कर जायेगा।

रजस्वला स्त्री चौथे दिन स्नान के पश्चात् तत्काल ही जैसे भाव, तथा चित्र और पुरुष के दर्शन करेगी तो उस मास में गर्भस्थित होने पर वैसे ही रंग रूप, विचार और भाव बच्चे में आ जाते हैं। उस समय स्त्री के नेत्र छाया चित्र (फोटो कैमरा) के लैन्स का काम करते हैं। उसमें प्रतिबिम्ब, मन, तथा भाव आदि गुप्त रूप से समाविष्ट हो जाते हैं।

महाभारत आदि पर्व—राजा शान्तनु के दोनों पुत्र चित्र वीर्य युवावस्था में और विचित्र वीर्य युद्ध में मारे गये। वंश का क्षय होने लगा। रानी सत्यवती ने व्यास जी को बुलाकर सन्तान लाभ के लिये अम्बिका के पास भेजा, उसने कुरूप आकृति को देखकर डर के मारे आँखें बन्द कर लीं, परिणाम स्वरूप धृतराष्ट्र अन्धे का जन्म हुआ। दूसरी बार अन्बालिका के कक्ष में व्यास जी को भेजा परन्तु अम्बालिका व्यास जी को देखकर पीली पड़ गई, रक्त की गति रुक गई, परिणाम स्वरूप समय आने पर रक्त अल्पता से युक्त पीत वर्ण पाण्डु का जन्म हुआ। फिर अम्बिका के कक्ष में व्यास जी को भेजा। परन्तु अम्बिका ने अपनी सेविका को अपने वस्त्रा भूषण धारण करा के उसे अपने कक्ष में भेज दिया। उस दासी ने प्रेम पूर्वक अलिंगन कर गर्भधारण किया। उससे महात्मा विदुर का जन्म हुआ।

आनन्दमग्न, प्रसन्नचित, शुद्ध विचारों के साथ गर्भाधान संस्कार के लिये अन्तःपुर में प्रवेश किया। कार्य में व्यस्त हो जाते हैं। समीपस्थ किसी साहूकार के घर पर डकैती पड़ती है, धायँ धायँ बन्दूकों के फायर होने लगते हैं। तत्काल मन में यह विचार उठा, डकैती पड़ रही है, और उसी समय वीर्यपात होकर गर्भस्थित हो जाये तो उस गर्भ से उत्पन्न बालक में दस्युराज के विचार रूप संस्कार प्रवेश कर जायेंगे, उसे कोई रोक नहीं सकेगा।

इस प्रकार गर्भाधान के समय की असावधानियों का उस शुद्ध चेतन जीवात्मा पर तत्काल संस्कार रूप में आवरण आच्छादित हो जाता है।

वीर अभिमन्यु की चक्रव्यूह भेदन की शिक्षा केवल गर्भ में ही प्राप्त की थी। महारानी मदालसा ने गर्भावस्था के समय की साधना से तीन बच्चों को सन्यासी और चौथे को राजा बनाया। इस प्रकार गर्भावस्था की भावना भी उस शुद्ध चेतन जीवत्मा को संस्कारी और निकृष्ट बना देती है।

जन्म के पश्चात् की शिक्षा, माता—पिता का व्यवहार, भोजन, सत्संग, संगत, आदि सब कुछ बच्चे के जीवन को बनाने में अथवा बिगाड़ने में अपनी भूमिका को नहीं छोड़ते।

पूर्व मनुष्य देह में किये हुऐ कर्मों का फल भोग कर जब मनुष्य देह में जीवात्मा आता है तो वह प्राप्तव्य की ओर ध्यान देता है। भोग और प्राप्तव्य यह दोनों अलग–अलग हैं। भोग अन्य भोग योनियों में जाकर भोगे जाते हैं, जहाँ कर्म कुछ नहीं है। परन्तु प्राप्तव्य अलग है, प्राप्तव्य के लिये प्रयत्न करना होता है। प्रयत्न करने में शुभाशुभ दोनों कर्म हो जाते हैं। जैसे पूर्व मनुष्य देह में किसी ने दान किया, परोपकार किया, शिक्षा की व्यवस्था की, असहाय बच्चों को पढ़ाने के लिये शुल्क, पुस्तकें, वस्त्र आदि की व्यवस्था की। इन सबके प्राप्तव्य मनुष्य देह में ही हो सकते हैं। दान, परोपकार, शिक्षा आदि मनुष्य के अतिरिक्त किसी और देह धारी को अपेक्षित नहीं है। अतएव इन सबका प्रतिफल प्राप्त करने के लिये जब जीवात्मा मनुष्य देह में आता है तभी उसे उन सब प्राप्तव्य की प्राप्ति हो जाती है। जिसके द्वारा वह योगी, वेदवक्ता, पथिक, दार्शनिक, अन्वेषक, लेखक, प्रोफेसर, वकील, डाक्टर, इन्जीनियर, राज नेता और धन वैभव आदि सब कुछ प्राप्त कर महान बन जाता है। चाहे वह कही पर भी क्यों न जन्मा हो। यह अवश्य है कि गर्भावस्था में मैथुन करने से गर्भित बच्चे के कुसंस्कार बन जाते है और वह ८० से ९०–९५ प्रतिशत तक कुसंस्कारों के दोषों, कुटैबों, कुव्यसनों में पड़कर निर्लज होकर रोगादिकों का शिकार बन जाते हैं।

इस प्रकार यह सिद्ध होता है कि मनुष्य देह में जीवात्मा शुद्ध चेतन रूप में ही आता है, परन्तु गर्भाधान आदि और उससे पूर्व की असावधानियों के कारण हमारे दोषों के फल स्वरूप उस जीवात्मा का सब कुछ ही नष्ट हो जाता है। सुसंस्कारित सन्तति के लिये 'इच्छानुसार सन्तान' पुस्तक में इस विषय पर अत्यधिक विस्तार से चर्चा की गई है।

सुलझे हुए एक व्यक्ति के मन में बहुत समय से यह शंका बनी हुई थी कि इतनी जीवात्मायें कहा से आ जाती है?

एक महात्मा ने उनसे समाधान के रूप में कहा—आपने आम खाया, उसकी गुठली मिट्टी में डाल दी, उसका पेड़ बन गया, उस

पर सहस्त्रों फल लगे। बस यही आपके प्रश्न का समाधान है। महात्मा जी के इस अलंकार से उनको बड़ी सन्तुष्टि मिली। आज मेरी शंका का समाधान हो गया। जब यह चर्चा मेरे सामने आई तो मैंने कहा—समाधान करने वाले महात्मा और शंका करने वाले दोनों ही अति मूढ़ हैं। आम के फलों के अनुसार क्या जीवात्माओं का जन्म होता है? नहीं! बिलकुल गलत है। ईश्वर जीव और प्रकृति यह तीनों अनादि हैं, इनका कभी जन्म नहीं होता यह सदैव एक रूप में ही रहती है। जीवात्माओं की बात तो बहुत दूर की है, हम अभी तक यह नहीं जान सके कि इस गगन में कितने भूमण्डल हैं और हर भूमण्डल में कितनी जीवात्मायें हैं। इनकी कोई गणना नहीं की जा सकती है। हाँ! जीवात्मायें न नई बनती हैं और न पुरानी मरती हैं। जब किसी भूमण्डल की प्रलय होती है तो उसकी जीवात्मायें परमात्म व्यवस्था से अन्य भूमण्डलों को चली जाती हैं।

वेदम् शरणम् आगच्छामि
सत्यम् शरणम् आगच्छामि
यज्ञम् शरणम् आगच्छामि

इति

निवेदन

राष्ट्र और संस्कृति की रक्षा के बारे में विचार करना प्रत्येक नागरिक का उत्तरदायित्व है। देश का बहुत बड़ा वर्ग यह तो चाहता है कि हमारी संस्कृति और राष्ट्र की रक्षा हो, परन्तु कैसे हो सकती है, यह नहीं जानता। इसी बात को समझाने के लिए यह पुस्तक आपके करकमलों तक पहुँचाने का हमारा उद्देश्य है। आप इसे पढ़ कर विचार करें। पुस्तक को पढ़कर आप यह कह सकते हैं कि हम इस अवस्था को पार कर चुके हैं, हमारे किस काम की? नहीं आप के काम की भी है। इसे पढ़ कर अपनी की गयी भूलों को सुधारने का एक सद्परामर्श दे सकते हैं। आप द्वारा दिया गया सद् परामर्श अत्यन्त प्रभावकारी होगा।

पुस्तक अत्यन्त उपयोगी है, परिवर्तन लाने के लिए परम आवश्यक है। लेखक ने सभी पक्षों को उजागर किया है, जो राष्ट्र को बलवान, बुद्धिजीवी, विवेकी और नीतिज्ञ सन्तानों को जन्म देने के लिए आवश्यक हैं। यदि आपने इनका उपयोग करके एक दो सन्तानें राष्ट्र को दे दीं तो आप सबसे बड़े देश भक्त कहलाने योग्य हो सकते हैं।

लक्ष्य राष्ट्र की रक्षा और उन्नति का है। यह कार्य तप का है, इन्द्रिय सुख के त्याग का है। देखना है कौन इसकी पहल करके ऋषि के पद को प्राप्त करता है।

ड्रग एण्ड फार्मास्युटिकल

जीलाल स्ट्रीट, मुरादाबाद

मुद्रक : राष्ट्रीय ऑफसैट प्रिन्टर्स, मुरादाबाद. फोन : 0591-2410699, 9359706829